आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

15, हनुमान रोड, नई दिल्ली

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा

सुरेन्द्र कुमार रैली

5

नयी पीढ़ी को सुसंस्कृत करने का उपक्रम

बालक और युवा ही भारत के भावी कर्णधार और निर्माता होंगे। लेकिन आज हमारी इस अमूल्य सम्पत्ति को निर्ममतापूर्वक विनष्ट किया जा रहा है। अपने इस मूलधन का विनाश हम खुली आँखों से देख रहे हैं। अमेरिकी वैश्वीकरण का घातक आक्रमण हमारे बालकों और युवाओं पर ही लगातार हो रहा है।

टी.वी., मोबाइल, कम्प्यूटर, इन्टरनेट ऐसे दुर्दमनीय साधन हैं जिनके द्वारा नई पीढ़ी के निर्माण में अभूतपूर्व योगदान हो सकता था, परन्तु ये साधन तो बन्दर के हाथ में पलीते की तरह पड़ गये हैं और इनके द्वारा नयी पीढ़ी को अपसंस्कृति के जाल में बड़ी सुगमता से फँसाया जा रहा है।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और उससे संलग्न आर्य विद्या परिषद् ने नयी पीढ़ी को सुसंस्कृत, संयमी, संवेदनशील, उत्तरदायित्वों को सहर्ष स्वीकार करने वाले नागरिक बनाने के लिए एक स्तुत्य उपक्रम हाथ में लिया है। शिष्टाचार और नैतिक शिक्षा का प्रचार और प्रसार ही उनका लक्ष्य है। उन्होंने इस विषय को लक्ष्य कर 12 भागों (कक्षा 1 से 12 तक) में व्यावहारिक और प्रभावशाली साहित्य का निर्माण किया है। इन पुस्तकों में छात्रों के शिष्टाचार और नैतिक विकास को दृष्टि में रखकर सामग्री प्रस्तुत की गयी है। छात्रों में उत्तम संस्कारों और आस्तिकता पर बल दिया गया है। इन पुस्तकों में संध्या और यज्ञ के साथ सदाचार की शिक्षा देने वाली सामग्री दी गयी है।

इन 12 पुस्तकों के लेखक व आर्य विद्या परिषद् के प्रस्तोता, श्री सुरेन्द्र कुमार रैली के धर्म, समाज और देश के प्रति सात्विक चिन्तन का ही मधुरफल है। लेखक ने प्रारंभ में ही बालकों को 12 अनिवार्य और आवश्यक बातें समझाई हैं। बालक के वैयक्तिक जीवन के साथ घर, परिवार, समाज, देश और धर्म का ज्ञान प्रश्नोत्तर शैली में कराया है। नित्यप्रति के व्यावहारिक ज्ञान से बालकों को अवगत कराया है। पुस्तक में ओ३म्, ईश्वर, वेद, वैदिक संध्या, प्रार्थना, गायत्री मन्त्र, वर्ण व्यवस्था, सत्यार्थ प्रकाश, कर्मफल, अग्निहोत्र, माँस भक्षण निषेध, त्रैतवाद, गोकरुणानिधि, मद्यपान निषेध, भारतीय दर्शन आदि विषय चर्चित हैं। दूसरे भाग में महापुरुषों के प्रेरणाप्रद चरित्र पुस्तकों की उपयोगिता को सिद्ध करते हैं। माता–पिता–गुरु की सेवा, अनुशासन, संयम, नमस्ते, स्वच्छता, सत्संगति, आसन प्राणायाम, एकता, श्रम, निष्ठा, शिष्टाचार, मित्रता, उत्तरदायित्व, सन्तोष, कर्तव्य परायणता, ब्रह्मचर्य, साहस, भ्रातृभाव इत्यादि सद्गुणों की शिक्षा, छोटी–छोटी कहानियों के माध्यम से, इस माला में अच्छी तरह चमक रही है। आर्य, आर्यावर्त, आर्य–समाज, गुरूकुल, डी.ए.वी., संस्कृत भाषा, इत्यादि विषयों का समावेश लेखक की सूझबूझ की दाद देता है। इन पुस्तकों का मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। पुस्तकों की भाषा प्रांजल, शैली सुबोध और हृदयग्राही है। छपाई, साज–सज्जा नयनाभिराम हैं। मूल्य अतिअल्प है। यह पुस्तकें घर–घर पहुँचने योग्य हैं।

- कै. देवरत्न आर्य
प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

मुद्रक : एस.एन. प्रिंटर्स, 1/11807, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

प्रार्थना मंत्र

ओं य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासतें
प्रशिषं यस्य देवाः यस्यछायाऽमृतं
मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम।।

यजु०२५।१३।

अर्थ

हे प्रभो ! आप ही आत्मिक व शारीरिक बल देने वाले हो।
भगवान्! समस्त विद्वान् आपकी उपासना व आपकी ही आज्ञा का पालन करते हैं।
आपकी शरण अमृत है और आपकी उपेक्षा मृत्यु।
प्रभो! हम सुखस्वरूप आपकी स्तुति करते हैं।

20

जय घोष

जो बोले सो अभय-**वैदिक धर्म की जय**

मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम चंद्र की-**जय**

योगिराज श्री कृष्ण चंद्र की-**जय**

गुरुवर दंडी विरजानंद महाराज की-**जय**

ऋषिवर स्वामी दयानन्द की-**जय**

धर्म पर मर मिटने वालों की-**जय**

देश पर बलिदान होने वालों की-**जय**

भारत माता की-**जय**

गौ माता का-**पालन हो**

आर्यसमाज-**अमर रहे**

वेद की ज्योति-**जलती रहे**

ओ३म् का झंडा-**ऊँचा रहे**

हमारा संकल्प-**कृण्वंतो विश्वमार्यम्**

वैदिक ध्वनि-**ओ३म्**

सब को वैदिक अभिवादन-**नमस्ते जी।**

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा

(भाग-5)

सुरेन्द्र कुमार रैली
एम.ए., एलएल.बी
प्रेरक व शिक्षाविद्
प्रस्तोता, आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली

पहला संस्करण – 2005
द्वितीय संस्करण – 2005
तृतीय संस्करण – 2006
आठवां संस्करण – 2011

मूल्य : ₹ 30.00

आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
15 हनुमान रोड, नई दिल्ली-110001

विषय सूची

19

प्रभु का धन्यवाद

आज मिल सब गीत गाओ उस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित गाते हैं गंधर्व गुणीजन धन्यवाद।।
मंदिर में कंदरों में पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ-सौ बार मुनिवर धन्यवाद।।
करते हैं जंगल में मंगल पक्षिगण हर शाख पर।
पाते हैं आनंद, मिल गाते हैं स्वर भर धन्यवाद।।
कुएँ में, तालाब में, सिंधु की गहरी धार में।
प्रेम-रस में तृप्त हो करते हैं जलचर धन्यवाद।।
शादियों में, कीर्तनों में, यज्ञ और उत्सव के आदि।
मीठे स्वर से चाहिए करें नर-नारी सब धन्यवाद।।
गान कर 'अमीचंद' भजनानंद ईश्वर की स्तुति।
ध्यान धर सुनते हैं श्रोता, कान धर-धर धन्यवाद।।

प्र.11 क्या हरिजनों एवं स्त्रियों को भी वेद पढ़ने का अधिकार है ?

उत्तर- हाँ, सबको वेद पढ़ने का पूर्ण अधिकार है।

प्र.12 क्या वेदों में मूर्ति-पूजा का विधान है ?

उत्तर- नहीं।

प्र.13 क्या वेदों में अवतारवाद का प्रमाण है ?

उत्तर- नहीं।

प्र.14 क्या वेदों में अवतारवाद का प्रमाण है ?

उत्तर- नहीं।

प्र.15 सबसे बड़ा वेद कौन सा है ?

उत्तर- ऋग्वेद ।

प्र.16 वेदों की रचना कब हुई ?

उत्तर- आज से लगभग 1 अरब 96 करोड़ वर्ष पूर्व।

प्र.17 वेद ज्ञान के सहायक दर्शन-शास्त्र कितने हैं और उनके लेखकों का क्या नाम है ?

उत्तर- **छः** -

न्याय दर्शन	गौतम मुनि
वैशेषिक दर्शन	कणाद मुनि
योग दर्शन	पातंजलि मुनि
मीमांसा दर्शन	जैमिनि मुनि
सांख्य दर्शन	कपिल मुनि
वेदांत दर्शन	व्यास मुनि

प्र.17 शास्त्रों के विषय क्या हैं ?

उत्तर- आत्मा, परमात्मा, प्रकृति, जगत् की उत्पत्ति, मुक्ति, इत्यादि।

प्र.18 प्रामाणिक उपनिषदें कितनी हैं ?

उत्तर- केवल ग्यारह ।

प्र.19 उपनिषदों के नाम बताएं ?

उत्तर- ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माडूं, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, वृहदारण्यक और श्वेताश्वतर।

प्र.20 उपनिषदों के विषय कहां से लिए गए हैं ?

उत्तर- वेदों से

भूमिका

शिक्षा से ही मानव जीवन का विकास होता है और इसके द्वारा मनुष्य के शरीर, हृदय तथा मस्तिष्क का विकास होता है। विद्यालयों में विभिन्न विषयों का पठन–पाठन विद्यार्थियों को अपने जीवन में सही दिशा प्राप्त करने में सहायक होता है, परन्तु उसका आत्मिक विकास, नैतिक शिक्षा के द्वारा ही संभव है, और इसी से विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास के लिए मानवीय मूल्यों की शिक्षा मिलती है। आर्यसमाज का सदैव प्रयास रहा है कि इन मानव मूल्यों से विद्यार्थियों को प्रारम्भ में ही अवगत करा दिया जाये। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा से सम्बद्ध आर्य विद्या परिषद्, दिल्ली ने शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा की पुस्तकें बच्चों को उपलब्ध कराई हैं जिनके द्वारा उनमें अच्छे संस्कार और ईश्वर में विश्वास पैदा हो, तथा संध्या-यज्ञ आदि के साथ-साथ महापुरुषों के जीवन-चरित्र, उनकी शिक्षाएँ और सदाचार की शिक्षा देने वाली कहानियां भी सम्मिलित की गई हैं।

इन पुस्तकों में राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (NCERT) के वर्ष 2000 के पाठ्यक्रम को भी ध्यान में रखा है जिसमें निर्देश दिया गया है कि बच्चों में सुरुचिपूर्ण संवेदनशीलता, स्वस्थ जीवन शैली, सकारात्मक सामाजिक चेतना, परिश्रम के प्रति आदर व नैतिक मूल्यों में आस्था का समावेश होना चाहिए ताकि वह दूसरों के

विचारों को बड़ी नम्रता से समझते हुआ सद्भाव एव विवेक से अपनी कथनी और करनी में उन्हें लाएं।

हमारा प्रयास है कि हम विद्यार्थियों में सत्य, सद्भाव, सहयोग, ईमानदारी और परिश्रम करने जैसे अनेक गुणों का उनके जीवन में समावेश कर सकें।

इन पुस्तकों के लेखन में जिन–जिन महानुभावों से प्रत्यक्ष रूप से अथवा उनके लेखों, कहानियों, गीतों व भजनों आदि के माध्यम से परोक्ष रूप से सहयोग मिला है, मैं उन सबके प्रति आभार व्यक्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि विद्यार्थी, अध्यापकवृंद और अन्य लोग इस पुस्तक को उपयोगी पायेंगे और विद्यार्थियों को सुसंस्कृत बनाकर राष्ट्रनिर्माण की सतत् पुण्यप्रक्रिया में सहयोगी होंगे।

सुरेन्द्र कुमार रैली

18
वैदिक प्रश्नोत्तरी

प्र.1 वेद किसे कहते हैं ?
उत्तर- ईश्वरीय ज्ञान की पुस्तक को वेद कहते हैं।
प्र.2 वेद-ज्ञान किस ने दिया ?
उत्तर- ईश्वर ने दिया ।
प्र.3 ईश्वर ने वेद-ज्ञान कब दिया ?
उत्तर- ईश्वर ने सृष्टि के आरम्भ में वेद-ज्ञान दिया।
प्र.4 ईश्वर ने वेद-ज्ञान क्यों दिया ?
उत्तर- मनुष्य–मात्र के कल्याण के लिए।
प्र.5 वेद कितने हैं ?
उत्तर- चार ।
प्र.6 वेदों का ज्ञान ईश्वर ने किन को दिया ?
उत्तर- चार ऋषियों को ।
प्र.7 वेदों का ज्ञान ईश्वर ने ऋषियों को कैसे दिया ?
उत्तर- समाधि की अवस्था में दिया।
प्र.8 वेदों में कैसा ज्ञान है ?
उत्तर- सब सत्य विद्याओं का ज्ञान
प्र.9 वेद कौन-कौन से हैं और किस-किस ऋषि द्वारा ज्ञान हुआ ?
उत्तर-

वेद	ऋषि	विषय
ऋग्वेद	अग्नि	ज्ञान
यजुर्वेद	वायु	कर्म
सामवेद	आदित्य	उपासना
अथर्ववेद	अंगिरा	विज्ञान

प्र.10 वेद पढ़ने का अधिकार किस को है ?
उत्तर- मानव-मात्र को।

2. 'माताजी', 'पिताजी', 'गुरुजी', 'बहनजी', 'भ्राताजी', 'दीदीजी', 'भैयाजी', 'श्रीमान् रमेशचन्द्र जी' आदि सम्बोधनों का प्रयोग करेंगे।
3. हम किसी के लिए भी 'तू', 'तुझे' आदि नहीं कहेंगे। इसके बदले सबके लिए 'आप' का प्रयोग करेंगे।
4. माता-पिता, गुरुजनों तथा बड़ों के आने पर हम खड़े होकर उनका सत्कार करेंगे।
5. हम बिना आज्ञा किसी के कमरे में नहीं जायेंगे।
6. हम कक्षा में और पुस्तकालय में पढ़ते हुए, भोजन करते हुए और सभा में बैठे हुए बातचीत नहीं करेंगे।
7. हम किसी की थोड़ी-सी भी सहायता के लिए 'धन्यवाद' करेंगे।
8. हम छिलके, कागज आदि इधर-उधर न बिखेरकर कूड़ेदान में डालेंगे।
9. हम हँसी-विनोद की बातों में भी शिष्टाचार का पूरा ध्यान रखेंगे। अपनी समान आयु के विद्यार्थियों के साथ हँसी-विनोद करेंगे। अपने से बड़ों के साथ दिल्लगी कभी न करेंगे।
10. हम किसी की वस्तु माँगकर उसे समय पर लौटाना कभी न भूलेंगे। किसी की वस्तु को सँभालकर रखेंगे और आवश्यकता पड़ने पर उसे भी अपनी वस्तु देने से हिचकिचाएँगे नहीं।
11. हम दूसरों के सामने अपनी बड़ाई नहीं करेंगे। दूसरों की निंदा भी नहीं करेंगे।

शिक्षकों से

शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा की इस पुस्तक का उद्देश्य बच्चों में सहजभाव से अच्छे संस्कार पैदा करना है। उनमें सदाचार के प्रति निष्ठा, महापुरुषों के प्रति श्रद्धा, नैतिक मूल्यों के प्रति जागरूकता एवं धार्मिक रूचि आदि गुण उत्पन्न करके उन्हें शालीन, शिष्ट, अनुशासनप्रिय और कर्त्तव्यनिष्ठ बनाना है। इसलिए शिक्षक इस विषय को ऐसी मधुर शैली से पढ़ाएं, जिससे बच्चों की इस ओर रूचि बढ़े और वह स्वतः बड़ी आतुरता से इस विषय के घण्टे के आने की प्रतीक्षा किया करें।

शिक्षक को पहले दिन से ही शिष्टाचार एवं नैतिक शिक्षा के विषय का परिचय कराते हुए, विद्यार्थियों को इसकी उपयोगिता से अवगत करवा देना चाहिए कि शिक्षा प्राप्ति के बाद वह चाहे किसी क्षेत्र में भी कार्यरत हों, यह ज्ञान उनको उनके दैनिक जीवन में आयुभर काम आएगा।

शिक्षकों से अनुरोध है कि इस पुस्तक के पाठों को रटाने का प्रयत्न न करें। बच्चों को केवल अच्छी तरह से उदाहरण देकर बात समझा दें। परीक्षा में प्रश्न पूछने की शैली वैसी ही होगी जैसी अन्य विषयों में होती है।

सुरेन्द्र कुमार रैली

3

शिक्षक निर्देश

सामान्य ज्ञान की बीस बातें

सबसे पहले विद्यार्थियों को शिष्टाचार, लोकाचार या अंग्रेजी में जिसे हम ऐटीकेट्स और उर्दू में अदब या तमीज कहते हैं, सिखाना चाहिए। उनको समय-प्रबंधन के नियमों की जानकारी दें और जीवन में इन नियमों को पालन करने का अभ्यस्त बनाएँ, क्योंकि यह एक सफल जीवन के आधारभूत गुण होते हैं। शिक्षक अपने विवेक के अनुसार बच्चों के स्तर और योग्यता को ध्यान में रखकर उन्हें पढ़ाएँ और सिखाएँ।

(1) **प्रकृति से साक्षात्कार :** विद्यालय में सबसे छोटे बच्चों को उनके चारों ओर जो कुछ भी दिखाई देता है, उससे उन्हें अवगत कराएँ। जैसे— आकाश, सूरज, चाँद, तारे, बादल, वर्षा, पशु (कुत्ता, बिल्ली, बंदर, चूहा, खरगोश, गिलहरी, गाय, भैंस, घोड़ा, हाथी, भालू, बकरी), पक्षी (तोता, चिड़िया, तितली, कौआ, मोर, कोयल, कबूतर), जलचर (मेंढक, मछली, मगरमच्छ), पेड़, पौधे, फूल, खेत, पहाड़, नदी, तालाब, नाव इत्यादि और बताएँ कि यह सब ईश्वर ने बनाए हैं। इसके लिए इससे संबंधित छोटी-छोटी कविताओं, गीतों और कहानियों को भी माध्यम बनाया जा सकता है।

किसी से टकरा जाओ जो 'क्षमा कीजिए' कहकर अपनी भूल स्वीकार कर लो। किसी अपाहिज, अन्धे या लँगड़े को 'अन्धा' आदि कहकर कभी मत पुकारो। दीवारों पर भली-बुरी बातें न लिखो। यदि कोई सो रहा है तो शोर मत करो।

विद्यालय में शिष्टाचार

अध्यापकों के सामने 'सावधान' स्थिति में खड़े होना चाहिए। उनसे बात करने समय मेज पर झुकना या हाथ-पाँव हिलाते रहना ठीक नहीं। जब शिक्षक पढ़ा रहे हों तो आपस में बातचीत नहीं करनी चाहिए। विद्यालय की सभा में बैठे हों तो भी चुप रहकर भाषण आदि सुनना चाहिए। कक्षा के कमरे में शोर मत करो, विशेषकर जब वहाँ अध्यापक जी न हों। एक-दूसरे छात्र के गले में हाथ डालकर कभी न बैठना चाहिए। लिखते समय पैन को ऐसे न झाड़ना चाहिए कि किसी पर स्याही के छींटे पड़ जायें। स्लेट को थूक लगाकर साफ न करो।

शिष्टाचार के दो नियम सदैव याद रखो। बड़े लोग जो काम करने के लिए कहें वह करो। जिसके लिए वे मना करें, वह मत करो। सड़क, उपवन बाग आदि सार्वजनिक स्थान पर जैसा नियम हो वैसा ही करो। नियम कभी मत तोड़ो।

विद्यार्थियों के लिए शिष्टाचार के काम

1. हम प्रातः उठकर बड़ों के चरण स्पर्श करेंगे या झुककर नमस्ते जी करेंगे। प्रतिदिन साथियों के मिलने पर हाथ जोड़कर नमस्ते जी किया करेंगे।

समय बहुत बोलना असभ्यता है। भोजन धीरे-धीरे चबा-2 कर खाना चाहिए, न कि पशुओं की तरह निगलना चाहिए।

बोलचाल संबंधी शिष्टाचार

अपने साथियों या बड़ों के नाम से पूर्व 'श्री' या अन्त में 'जी' लगाकर बोलना चाहिए । यदि कोई बात कर रहा है या गीत सुना रहा है तो उसे बीच में टोककर अपनी बात सुनाने लगना असभ्यता है। जब कोई व्यक्ति किसी दूसरे से बात कर रहा हो, बिना बुलाये उनकी बातों में बोल पड़ना अच्छा नहीं। किसी की पीठ पीछे निंदा नहीं करनी चाहिए। यदि कोई छोटी-सी भी सहायता करे तो उसे 'धन्यवाद' देना चाहिए। विद्यालय में या घर में जोर-जोर से चिल्लाकर बातें करना बुरा है। बात सुनाते समय स्वयं हँसना मूर्खता है। किसी सभा में सभापति की आज्ञा के बिना नहीं बोलना चाहिए। कक्षा में जब शिक्षक पढ़ा रहा हो तो आपस में बातें करना बहुत गलत है। किसी को गाली देना या खिल्ली उड़ाना बहुत बड़ी नीचता है।

सामान्य व्यवहार में शिष्टाचार

यदि कोई हमारे घर में आये तो उसका सत्कार करना चाहिए। बैठने को आसन, पीने को पानी और 'आइए जी, नमस्ते' आदि मीठे शब्दों से उसका स्वागत करना चाहिए। हम किसी के घर जाएँ तो उनकी वस्तुओं को छेड़े नहीं। खाँसते समय मुँह के आगे रूमाल रखना चाहिए। यदि किसी के साथ मिलकर कोई समय निश्चित हुआ है तो वहाँ अवश्य पहुँचो और समय से पूर्व पहुँचो। यदि भीड़ में

(2) **खाने-पीने की वस्तुओं का ज्ञान :** एक बार प्रकृति से साक्षात्कार हो जाने के बाद इन्हीं बच्चों को शिक्षक उन वस्तुओं का ज्ञान करवाए, जो ये बच्चे रोज खाते-पीते हैं। जैसे– रोटी, डबल रोटी, सब्जी, दाल, सलाद, फल, दूध, पानी, शरबत और उन्हें बताएँ कि यह सब उनको ईश्वर देता है। छोटे-छोटे गीतों के माध्यम से, चित्रों और खिलौनों के प्रयोग द्वारा रोचकता लाते हुए शिक्षक बच्चों को इन वस्तुओं का परिचय दे सकते हैं।

(3) **कपड़ा, मकान और विद्यालय का ज्ञान :** छोटे बच्चे जब खाने-पीने की वस्तुओं से अच्छी तरह परिचित हो जाएँ तो ऋतुओं के अनुसार जो कपड़े वह पहनते हैं, उनकी पूरी जानकारी शिक्षक को उन्हें देनी चाहिए, ताकि उन्हें सर्दी, गर्मी, वर्षा, बसंत, पतझड़, बहार से भी अवगत कराया जा सके। जिस मकान में बच्चे रहते हैं; उसके घर के कमरों, पाकशाला, स्नानागार, शौचालय, आँगन एवं छत की विस्तार से जानकारी देते हुए उन्हें उनके परिवार के सदस्यों का भी परिचय अच्छी प्रकार कराएँ। बच्चे जिस विद्यालय में पढ़ते हैं, उसका ज्ञान बच्चों को देना अत्यंत आवश्यक है। विद्यालय, प्रधानाचार्य एवं शिक्षक का नाम, उनकी कक्षा, पुस्तकालय तथा विद्यालयसंबंधी पूरी जानकारी देते हुए बच्चों के हृदयपटल पर निश्चयपूर्वक यह अंकित कर दें कि कपड़े, मकान, विद्यालय और पुस्तकें आदि सब ईश्वर देता है।

(4) **दिनचर्या की चर्चा :** शिक्षक विद्यार्थियों को उनकी दिनचर्या के बारे में विस्तार से बताएँ और समझाएँ कि उनको कब क्या करना चाहिए और अपने दिन को उन्हें किस तरह समय-प्रबंधन के सिद्धांतों के अनुसार व्यतीत करना चाहिए।

प्रातः सूर्योदय से पूर्व उठना, उठते ही अपनी शय्या पर बैठ कर ईश्वर को 'ओ३म्' कहकर स्मरण करना, अपना पहला कदम शय्या से नीचे रखते हुए पुनः ईश्वर को 'ओ३म्' कहकर स्मरण करना, फिर दादा-दादी, नाना-नानी, माता-पिता के चरणस्पर्श करना, अपने भाई-बहनों को व घर में अन्य लोगों को आयु के अनुसार, चरणस्पर्श या 'नमस्ते जी' कहना। उसके उपरांत शौच जाना और शौच के बाद हाथ-मुँह धोना व ताजा पानी पीना इत्यादि।

(5) **शरीर की सफाई :** बच्चों को उनके शरीर का ज्ञान देना और शरीर को साफ-सुथरा रखने की आवश्यकता पर जोर देना। उन्हें मुँह और दाँतों की सफाई के बारे में विस्तार से बताना, कुल्ला करना, दाँतों को दातुन, हाथ से मंजन अथवा ब्रश से पेस्ट इत्यादि लगा कर कैसे साफ करना है यह सिखाना चाहिए। उन्हें चॉकलेट से दाँतों को होने वाले नुकसान से भी अवश्य अवगत कराना चाहिए, क्योंकि इस आयु में माता-पिता के लाड़-प्यार से बच्चे चॉकलेट खूब खाते हैं, जो उनके दाँतों को बहुत नुकसान पहुँचाता है। शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को नीम की दातुन, हाथों की अँगूली से मंजन करने और अँगूली से मसूड़ों की मालिश करने के लाभ व पेस्ट व ब्रश के गलत प्रयोग से होने वाली हानि से भी अवगत करवाएँ और दाँतों पर कम से कम पेस्ट का प्रयोग करने की सलाह दें।

(6) **सुबह की सैर व कसरत करना :** शिक्षक को चाहिए कि वह बच्चों को सुबह की सैर, तीव्र गति से चलने और दौड़ने के बारे में विस्तार से बताएँ कि यह सब उनके शरीर को कैसे

17

महान् गुण : शिष्टाचार

शिष्टाचार का अर्थ है, दूसरों के साथ सभ्य व्यवहार करना। शिष्टाचार में अनेक अच्छी बातें आती हैं। इनमें से बहुत-सी बातें तो हमें हमारे माता-पिता और शिक्षक सिखा देते हैं। फिर भी हमें शिष्टाचार की कुछ निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए ।

खानपान के समय शिष्टाचार

खाने-पीने की वस्तुओं के लिए लड़ाई-झगड़ा और छीना-झपटी नहीं करनी चाहिए। पलेटों या पत्तलों को चाटना नहीं चाहिए। चलते-फिरते हुए पशुओं की तरह चरते नही रहना चाहिए। फलों आदि के छिलके इधर-उधर नहीं फेंकने चाहिए। जूतों में या गंदे स्थान पर बैठकर नहीं खाना-पीना चाहिए। मित्रों और भाई-बहनों के पास होते हुए अकेले ही खाना-पीना अच्छा नहीं। खाते हुए कपड़ों या फर्श आदि पर दाग लगाना बुरा है। अँगुलियाँ चाटना ठीक नहीं। खाते-पीते

दूसरा रुपया दूधिये के कपड़ों पर फेंकता था। इस प्रकार उसने आधे रुपये पानी में फेंक दिये, बाकी आधे रुपये दूधिये के पास पहुँच गए। दूधिया समझ गया कि बन्दर ने ठीक न्याय किया है। मैं दूध में आधा पानी मिलाता था अतः उसने आधे रुपये पानी में फेंक दिये। मेरा आधा दूध शुद्ध होता था अतः आधे रुपये मुझे वापस मिल गए।

तब से वह ईमानदारी से दूध बेचने लगा और उसने दूध फिर कभी पानी नहीं डाला।

जो व्यक्ति ईमानदारी से काम नहीं करता, उसे कभी न कभी दंड अवश्य मिलता है। अतः हमें ईमानदार बनना चाहिए।

विद्यार्थियों के लिए ईमानदारी के काम

1. हम परीक्षा में नकल नहीं लगायेंगे। नकल लगाने में दूसरों की सहायता भी न करेंगे।
2. हम विद्यालय से मिला हुआ लेखन-कार्य अपने परिश्रम से करेंगे। दूसरों की कॉपी से नहीं उतारेंगे।
3. हमसे कोई भूल हो जाये तो हम उसे स्वीकार करेंगे। हम बचने के लिए दूसरों का झूठा नाम नहीं लगायेंगे।
4. किसी की खोई हुई वस्तु मिलने पर हम उसे अपने पास न रखेंगे या तो उसके स्वामी के पास पहुँचा देंगे या उचित अधिकारी को सौंप देंगे।
5. हम जिसके साथ जो बात पक्की करेंगे उसे अवश्य निभायेंगे ।
6. हम झूठे बहाने बनाकर बनावटी छुट्टी न लेंगे।
7. हम बस या गाड़ी में बिना टिकट यात्रा नहीं करेंगे और आधे टिकट के लेने में गलत आयु नहीं बतायेंगे।
8. हम किसी से बिना पूछे उसकी कोई वस्तु न उठायेंगे।

स्वस्थ व प्रसन्न रखते हैं ! कसरत में दंड-बैठक, विभिन्न योग के आसन, व्यायाम इत्यादि की पूरी जानकारी देते हुए बच्चों का मार्गदर्शन करना चाहिए। उन्हें लोहे के डंबल, भार उठाने के व्यायाम और आधुनिक जिम के बारे में भी बताएँ और उनसे होने वाले लाभ और हानि की चर्चा भी अवश्य करें। शरीर की तेल से मालिश या हाथों से सूखी मालिश के लाभ भी उन्हें बताएँ।

(7) **नहाना :** शरीर की सफाई के क्रम में विद्यार्थी को प्रतिदिन नहाने का निर्देश देना और उससे होने वाले लाभ से अवगत करवाना। नहाने का सही तरीका क्या है, कौन से साबुन से नहाना और कितना साबुन लगाना, बालों को कैसे और किस से धोना, शैंपू इत्यादि और अप्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधनों से होने वाले नुकसान और प्राकृतिक सौंदर्य प्रसाधनों से लाभ बतलाना। स्नानागार में नल या फव्वारे के नीचे या बाल्टी से नहाने में पानी को बरबाद न करके कम से कम पानी के प्रयोग का निर्देश देना, ताकि पानी सब के लिए प्राप्त हो सके और शरीर को अधिक से अधिक मल-मलकर नहाने से लाभ भी बताना कि इससे पूरे शरीर की मालिश हो जाती है, जो अच्छी त्वचा और अच्छे स्वास्थ्य के लिए बहुत जरूरी है। शहरों में नहाने के लिए स्नानागार हैं तो गाँवों में कुआँ और तालाब होता है, जिसके पानी से नहाया जाता है। नहाने के बाद तौलिए का प्रयोग भी सिखाना चाहिए कि किस तरह शरीर को अच्छी तरह से रगड़कर पोंछना चाहिए।

(8) **कपड़े पहनना :** बच्चों को कपड़ों के चयन के बारे में भी विस्तार से बताना चाहिए। गर्मियों में वे कैसे वस्त्र पहनें, सर्दियों में किन वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए और वर्षा-ऋतु के लिए

कौन से वस्त्र पहनने उचित रहते हैं ? उन्हें खादी, सूती, रेशमी और सिंथेटिक कपड़ों की जानकारी व विभिन्न प्रकार के कपड़ों के प्रयोग से होने वाले लाभ तथा हानि की पूरी जानकारी दें।

(9) **ईश्वरस्तुति, प्रार्थना व संध्या :** स्नान के उपरांत ईश्वरस्तुति, प्रार्थना या संध्या करनी चाहिए। बच्चों के स्तर और योग्यता के अनुसार उन्हें छोटे-छोटे गीतों, भजनों के माध्यम से शुरू करवा कर, गायत्री मंत्र के बाद पाँचवीं कक्षा तक आते-आते पूरी संध्या अर्थसहित स्मरण करवा देनी चाहिए।

(10) **यज्ञ करना :** संध्या के बाद यज्ञ करना चाहिए। यज्ञ क्यों और कैसे करना चाहिए ? कक्षा छह से कक्षा दस तक पहुँचते-पहुँचते प्रत्येक विद्यार्थी को दैनिक यज्ञ करना आ जाना चाहिए।

(11) **खाना :** अच्छी तरह से समझाकर विद्यार्थियों के मन में यह धारणा बैठा देनी चाहिए कि संध्या व यज्ञ के उपरांत ही उन्हें खाना खाना चाहिए। सुबह के नाश्ते में दूध, फल, अंकुरित एवं उबले हुए चने, मूंग साबुत और मौठ या अन्य पौष्टिक आहार लेना चाहिए। डबल रोटी या पराँठा इत्यादि भी कभी-कभी खा सकते हैं। दोपहर और रात के भोजन में रोटी, सब्जियों, दालों, और सलाद इत्यादि खाने की प्रेरणा देते हुए उनसे शाकाहारी भोजन के लाभ और माँसाहारी भोजन से होने वाली हानियों की विस्तार से चर्चा करनी चाहिए। बच्चों को फास्ट फूड और मैदे से बनी नूडल्स इत्यादि से परहेज करने से भी अवगत कराएँ। उन्हें अच्छी तरह से यह बता देना चाहिए कि क्योंकि – मैदा, मेदे (पेट) को खराब करता है, अतः ऐसी चीजों को कभी-कभी तो ले सकते

और अपने घर चला गया। एकाएक उसकी नजर पिछली सीट पर पड़ी। उस पर एक बटुआ पड़ा था। राजू ने देखा, उसमें पांच हजार रुपये थे। राजू चाहता तो सारे रुपये अपने पास रख लेता, किन्तु वह ईमानदार था। अतः उसने वाहन में छूटे हुए रुपये उनके असली स्वामी को देने का निश्चय किया।

संयोग से उसे बटुए में एक पोस्टकार्ड भी पड़ा हुआ मिला जिस पर उस व्यक्ति का पता लिखा हुआ था। राजू ने मकान ढूँढकर अपनी सवारी को पहचानते हुए कहा – "बाबूजी ! लीजिए, आपका यह बटुआ वाहन में रह गया था। देख लीजिए– सब वस्तुएँ ठीक हैं न।" बाबूजी ने देखा, सब–कुछ ठीक था। यह देखकर राजू लौट पड़ा। बाबूजी ने लपककर पांच सौ रुपये उसकी ओर बढ़ा दिये और कहा "भैया ! यह तुम्हारी ईमानदारी का इनाम है।" किन्तु राजू ने वे रुपये लेने से इनकार कर दिया और कहा – "बाबूजी, यह तो मेरा कर्तव्य है कि आपकी वस्तु आपके पास पहुँचाता।"

बेईमानी की कहानी

बेईमानी या धोखे का फल अच्छा नहीं निकलता। इस विषय में एक दन्तकथा प्रसिद्ध है।

एक दूधिया था। वह दूध में आधा पानी मिलाकर बेचता था। एक बार ग्राहकों से दूध के रुपये बटोरकर वह घर लौट रहा था। रास्ते में वह कपड़े उतारकर एक नदी में नहाने लगा। उधर से एक बन्दर आया। उसने दूधिये के रुपयों की पोटली उठा ली। वह एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ गया। फिर वह पोटली में से रुपये निकाल-निकाल कर फेंकने लगा। वह एक रुपया नदी के पानी में फेंकता था,

16

महान् गुण : ईमानदारी

ईमानदारी का अर्थ है जो काम सच्चा है और व्यवहार में भी सच्चाई दिखाता है। जो लेन्-देन में धोखा नहीं करता और जिसका दिल साफ रहता है। जो किसी की वस्तु हड़पने का यत्न नहीं करता। बिना पूछे किसी वस्तु को हाथ भी नहीं लगाता।

ईमानदारी के लाभ

ईमानदारी से ही संसार के काम-धंधे सुचारू रूप से चलते हैं। विद्यालय में जो विद्यार्थी एक बार किसी की पुस्तक लेकर फिर लौटाता नहीं, उस पर कोई विश्वास नहीं करता। उसे कोई अपनी वस्तु कभी नहीं देता क्योंकि वह ईमानदार नहीं। इसके विपरीत ईमानदार विद्यार्थी आपकी वस्तु समय पर आपके घर पर आकर लौटा जाते हैं और साथ में धन्यवाद भी करते हैं। अब आप ही बताओ कि उस ईमानदार विद्यार्थी को आप पुनः अपनी पुस्तक आदि दोगे या नहीं ? आप अवश्य दोगे। दूसरे सब लोग भी उस पर विश्वास करेंगे। अतः समझ लो कि ईमानदार बनना बहुत आवश्यक है।

सच्ची घटना

राजू के स्कूटर पर स्टेशन से दो सवारियाँ बैठीं। उनको गांधी नगर जाना था। राजू ने उन्हें वहाँ उतार दिया

हैं, लेकिन नियमित भोजन में इनको लेना स्वास्थ्य के लिए बड़ा हानिकारक होता है।

बच्चों को समय पर खाना, बासी खाना न खाने, न ज्यादा गर्म न ज्यादा ठंडा खाना, खूब चबा-चबाकर खाना और खाने के बाद कुल्ला कर के हाथ-मुँह धोने की पूरी प्रक्रिया उन्हें विस्तार से समझानी चाहिए। नीचे बैठकर खाने और मेज-कुर्सी पर बैठकर खाने व पार्टियों में खाने के नियमों और तरीकों पर भी रोशनी डालनी चाहिए, ताकि बच्चे प्रत्येक दृष्टिकोण से खानपान के संबध में उचित व अनुचित का भेद ठीक से समझ सकें।

बच्चों को ठंडे-पेयों–कोकाकोला, पेप्सी, लिम्का, थम्जअप इत्यादि से होने वाली हानियों से भी अवगत करवा देना चाहिए। उन्हें विज्ञान की प्रयोगशाला में ले ज़ा कर इन ठंडे पेयों की पी. एच. वैल्यू निकालकर दिखाएँ और तेजाब व फिनायल की पी.एच. वैल्यू निकालकर तुलना करें, जो लगभग एक ही आएगी इससे उनको यह भली-भाँति समझ में आ जाएगा कि उनके लिए क्या पीना ठीक है और क्या गलत ? ऐसे ठंडे पेय के स्थान पर बच्चों को ताजे फलों और सब्जियों के रस, दूध, लस्सी, छाछ, नींबू-पानी, सत्तू इत्यादि को पीने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, जो उनके शरीर व स्वास्थ्य के लिए अत्यंत उपयोगी है।

(12) **विद्यालय की उपयोगिता :** विद्यार्थियों को प्रसन्नता से विद्यालय में जाने के लिए उत्साहित करना चाहिए। शिक्षा की उपयोगिता उन्हें समझाते हुए उनमें निरंतर सीखने की ललक पैदा करना शिक्षक का परम कर्त्तव्य है। उदाहरण के लिए बच्चों को उन महापुरुषों की कहानियाँ सुनानी चाहिए जिन्होंने विद्याप्राप्ति

के लिए घोर प्रयत्न, तप व साधना की थी। डी.ए.वी. के संस्थापक महात्मा हंसराज के बचपन व भारत के दूसरे प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री की कहानियाँ इस संदर्भ मे बहुत प्रेरक हैं।

बचपन में महात्मा हंसराज अपने स्कूल से दोपहर को जब अपने घर वापस आते थे तो रास्ते में नदी के तट पर रेत बहुत गर्म होती थी, जबकि उनके पास जूते भी नहीं थे। गर्म रेत पर चलते-चलते जब उनके पैर जलने लगते थे, तो वह अपनी लकड़ी की तख्ती (उन दिनों लिखने के लिए लकड़ी की तख्ती का प्रयोग होता था) पैरों के नीचे रखकर थोड़ा-सा विश्राम करते थे और फिर गर्म रेत पर भागते थे, जब गर्म रेत पर और चलना उनके लिए असह्य हो जाता था तो वह पुनः तख्ती का प्रयोग करते थे। इतनी कठिन परिस्थितियों में उन्होंने शिक्षा-ग्रहण की थी और आज उनके द्वारा संस्थापित डी.ए.वी. विद्यालयों में लगभग दस लाख विद्यार्थी प्रतिवर्ष शिक्षा-ग्रहण कर रहे हैं।

स्वतंत्र भारत के दूसरे प्रधानमंत्री माननीय श्री लाल बहादुर शास्त्री जी बड़े गरीब परिवार से थे। उनका विद्यालय नदी के उस पार था और नाव में बैठकर उस पार विद्यालय में जाने के लिए नाविक को देने के लिए उनके पास किराए के पैसे नहीं होते थे, इसलिए वह अपना बस्ता पीठ पर बाँधकर रोज तैरकर नदी पार करते थे और इस प्रकार वे अपने विद्यालय पहुँचते थे।

इसी प्रकार की अन्य कहानियों से प्रेरित करके विद्यार्थियों का उत्साह बढ़ाना–उनका प्रसन्नता से विद्यालय में आना व उनमें एक नया जोश पैदा करना–शिक्षक का कर्त्तव्य है, ताकि शिक्षा-ग्रहण करके विद्यार्थी अपने विद्यार्थी जीवन में ही समाज और देश

था। बुरे मनुष्य की संगति से मोहन बुरी बातें सीख गया। अतः वह मारा गया।

इससे हमें शिक्षा मिलती है कि हम सदा अच्छे लोगों की संगति करें। बुरे लोगों से दूर रहें।

विद्यार्थियों के लिए सत्संगति के काम

1. हमें ऐसे लड़कों के साथ नहीं घूमना चाहिए जो गालियाँ बकते हैं और बात-बात में लड़ते हैं, जुआ खेलते हैं, स्कूल से भाग जाते हैं और झूठ बोलते हैं।
2. हमें ऐसी सहेलियाँ नहीं बनानी चाहिए जो बहुत फैशन करती हैं या लड़ाकी हैं, झूठी हैं।
3. जिनकी नाक बहती रहती है, जिनके सिर में जुएँ हैं, जिनके कपड़ों से बदबू आती है, जिन्हें खुजली रहती है – हम ऐसे छात्र-छात्राओं से सम्पर्क नहीं रखेंगे।
4. जो पुस्तकें, पैसे और पैन आदि चुराते हैं – हम उनको अपना मित्र या सहेली नहीं बनाएँगे।
5. हम विद्यालय में योग्य विद्यार्थियों के साथ रहेंगे जो साफ–सुथरे और सच्चे हैं। जो नियम पालते हैं। जो पढ़ने–लिखने का काम नियम से करते हैं।
6. हम अकेले रहना पसन्द करेंगे, पर बुरे लड़कों/लड़कियों का संग कभी न करेंगे। उनसे खेलने के बदले हम अच्छी–अच्छी कहानियाँ/पुस्तकें पढ़कर अपना मन बहला लिया करेंगे।

कहता था – "आइए जी, नमस्ते! आसन पर बैठिए! पानी पीजिए!" सोहन भी कहता–"आइए जी, नमस्ते! आसन पर बैठिए! पानी पीजिए!"

उधर सोहन के भाई मोहन ने एक नीम के पेड़ पर अपना घोंसला बनाया। पेड़ के नीचे एक शराबी का घर था। शराबी को गालियाँ देने की आदत थी। जब कोई उसके पास आता तो वह कहता' "अरे चांडाल! यहाँ क्यों आया है ? निकल यहाँ से, नहीं तो मैं तुझे जूते लगाऊँगा।" शराबी की संगति से मोहन भी कहना सीख गया –"अरे चांडाल! यहाँ क्यों आया है? निकल यहाँ से, नहीं तो मैं तुझे जूते लगाऊँगा।"

एक दिन एक शिकारी आया। वह सोहन और मोहन दोनों को पकड़कर ले गया। उसने दोनों को एक पिंजरे में बन्द करके बेच दिया। सोहन को एक व्यापारी ने खरीदा।

जब घर या बाहर का कोई भी आदमी आता तो सोहन कहता –"आइये जी, नमस्ते ! आसन पर बैठिए! पानी पीजिये!" सोहन की ये बातें सुनकर लोग उसे चूरी और मीठे फल देते थे।

उधर मोहन को एक सिपाही ने खरीदा। जब घर या बाहर का कोई आदमी उसके पास आता तो मोहन कहता– "अरे चांडाल ! यहाँ क्यों आया है ? निकल यहाँ से, नहीं तो मैं तुझे जूते लगाऊँगा।" उसकी ये बातें सुनकर सिपाही को बड़ा क्रोध आया। उसने बंदूक से मोहन को मार दिया।

सोहन और मोहन एक ही माँ-बाप के बच्चे थे, किन्तु दोनों की संगति अलग-अलग थी। साधु की संगति से सोहन अच्छी बातें सीख गया। अतः उसे पुरस्कार मिलता

के लिए कुछ कर दिखाने की प्रेरणा ग्रहण कर लें।

शिक्षक को विद्यालय जाते हुए व विद्यालय से घर वापस आते हुए सामान्य व्यवहार के निर्देश विद्यार्थी को देने चाहिए, जिसमें सड़क पर देख-भालकर चलना, सड़क पर पड़ी वस्तुओं को ठोकर मारकर न चलना, अपने बाईं ओर चलना, साइकिल, स्कूटर, मोटरसाइकिल या कार को सीमित गति से चलाना । सिर पर हेलमेट का प्रयोग करना, रास्ते पर सीधा चलना, टेढ़े चलने की आदत से बचना, शांति से चलना, दौड़कर सड़क पार न करना, रास्ते में बतियाते या शोर मचाते हुए न चलना, आते-जाते किसी प्रकार की छेड़खानी न करना, घर से सीधा विद्यालय और विद्यालय से सीधा घर वापस जाना इत्यादि बातें विद्यार्थियों को विस्तार से समझा देनी चाहिए।

पाठशाला में जाकर अध्यापकों और साथियों को हाथ जोड़कर 'नमस्ते जी' कहना और 'चरणस्पर्श' करने का तरीका भी बताना चाहिए। आमतौर पर बच्चों को जब उन्हें कोई पुरस्कार मिलता है तो वह पुरस्कार देने वाले के पैरों को छूने के लिए झुकते तो हैं, लेकिन ऐसा आमतौर पर देखा गया है कि वह उसके घुटनों तक ही पहुँच कर रह जाते हैं । अतः शिक्षक को हाथ जोड़कर 'नमस्ते जी' कहने का और 'चरणस्पर्श' करने का तरीका व महत्त्व बच्चों को अच्छी तरह से समझाना चाहिए।

(13) **विद्यालय में पढ़ना :** विद्यार्थियों को कक्षा में चुपचाप अनुशासन में बैठने का अभ्यास भी शिक्षक को करवाना चाहिए। केवल बार-बार चिल्लाकर यह कहना कि 'चुप हो जाओ' अच्छे शिक्षक की पहचान नहीं है। शिक्षक विद्यार्थियों को निर्देश दें कि

वह विद्यालय में कभी भी ऊँचे स्वर में या चिल्लाकर न बोलें। हमेशा संयम में रहते हुए शांत स्वर में बातचीत किया करें। विद्यार्थी नीचे टाट पर, डेस्क पर या मेज-कुर्सी पर कैसे बैठे ? उसे सीधा बैठने का सही तरीका बताना चाहिए। उन्हें रीढ़ की हड्डी व गरदन सीधी रखकर बैठना व जितना उचित हो उतना गरदन झुका कर लिखना भी शिक्षक को सिखाना चाहिए। विद्यार्थी को लिखने-पढ़ने की जैसी आदत इस आयु में पड़ जाती है, वह जीवन पर्यंत वैसे ही करता रहता है । अतः शिक्षक को अपने विवेक द्वारा उन्हें निर्देशित करना चाहिए।

जब शिक्षक पढ़ा रहा हो तो सभी विद्यार्थी मन लगाकर पढ़ें ऐसा शिक्षक को सुनिश्चित करना चाहिए। उसके लिए शिक्षक को उन्हें सुनने की कला से भी अवगत करवाना चाहिए कि किस प्रकार विद्यार्थी को अपने कान, मन, बुद्धि और आत्मा को पूरी तरह से शिक्षक के पाठ की ओर लगाना है और यदि कुछ समझ में ना आए तो उसको पूछने में उन्हें झिझकना नहीं चाहिए और ना ही आलस्य करना चाहिए।

शिक्षक को बच्चों के श्रुतलेख की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए । आमतौर पर शिक्षक कॉपी में इतना भर लिख देते हैं कि 'श्रुतलेख सुधारो' और इसी से अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। लेकिन उनको सही तरीके से वर्णमाला के प्रत्येक अक्षर का लिखकर अभ्यास करवाना चाहिए और जहाँ कहीं, कभी भी विद्यार्थी द्वारा ठीक नहीं लिखा जाता तो उस विशेष अक्षर को बार-बार उससे लिखवाकर उसका लेखन ठीक करवाना चाहिए ।

विद्यार्थी को एकांत में पढ़ने और स्मरण करने कि विधि

अपना भाई-बहन समझते हैं। वे मीठा बोलते हैं और मीठा व्यवहार करते हैं। वे दूसरों की सहायता करते हैं, बड़ों की आज्ञा मानते हैं। वे ईमानदार होते हैं। वे अनुशासन में रहते हैं। ऐसे विद्यार्थियों को अपना साथी बनाना चाहिए।

बुरे मित्रों की पहचान

जो इनसे उलटे काम करते हैं वे बुरे विद्यार्थी हैं। वे गन्दे रहते हैं या बहुत फैशन करते हैं। वे गन्दे शब्द बोलते हैं। गालियाँ बकते हैं। सिगरेट पीते हैं। पैसे चुराते हैं। जुआ खेलते हैं। झूठ बोलते हैं। विद्यालय से भाग जाते हैं। वे बड़ों का कहना नहीं मानते। वे बात–बात पर लड़ाई–झगड़ा करते हैं। ऐसे बालकों का संग नहीं करना चाहिए।

बुरी संगति से हानि

बुरे विद्यार्थी के संग से बुरी आदतें पड़ जाती हैं। फिर वे दूर नहीं होती। बुरी आदतों के कारण उन्हें कोई नहीं चाहता। अतः हमें अच्छे कार्य करने चाहिए और अच्छे लोगों का संग करना चाहिए।

कहानी

एक वृक्ष पर तोतों का एक जोड़ा रहता था। उनके दो बच्चे थे। एक का नाम सोहन था, दूसरे का नाम मोहन था। बच्चे जब बड़े हुए तो वे अपने माता-पिता से अलग रहने लगे।

सोहन ने एक साधु की कुटिया के पास एक पेड़ पर घोंसला बनाया। वह साधु की संगति से अच्छी-अच्छी बातें बोलना सीख गया। जब कोई बाहर से आता तो साधु उसे

15

महान् गुण : सत्संगति
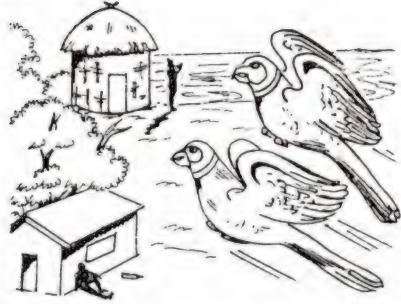
सत्संगति

अच्छे लोगों के संग को सत्संग, सत्संगति कहते हैं। अच्छे लोग वे नहीं होते जो चमकीले कपड़े पहनते हैं या जो ऊँचे घरों में रहते हैं। अच्छे लोग वे हैं जिनमें गुण अच्छे हैं, जिनका स्वभाव अच्छा है, जिनकी आदतें अच्छी हैं। दुनिया में अच्छे लोग भी हैं और बुरे भी। अतः हमें अच्छे और बुरे की पहचान होनी चाहिए।

अच्छे मित्रों की पहचान

विद्यार्थियों को चाहिए कि वे अपने मित्र बनाने से पहले उनके गुण और दोष अवश्य देख लें। अच्छे मित्रों के गुण ये हैं – वे साफ रहते हैं। साफ वस्त्र पहनते हैं। सत्य बोलते हैं। वे हँसमुख रहते हैं। सबको 'जी' और 'आप' कहकर पुकारते हैं। वे किसी से लड़ते नहीं। वे समय पर सब काम करते हैं। मेहनत में किसी से पीछे नहीं रहते। सबको

बतानी अत्यंत आवश्यक है। वैसे तो विषय को अच्छी तरह समझकर व स्वयं लिखकर स्मरण करना ही इसका सबसे बढ़िया तरीका है। लेकिन पाठ को बार-बार दोहराकर और उसे लिखकर भी स्मरण किया जा सकता है।

(14) **खेलना** : शिक्षक को चाहिए कि वह खेल-कूद के विविध विषयों का ज्ञान विद्यार्थियों को कराएँ, खेलों की पहचान करवानी चाहिए जिसमें फुटबॉल, क्रिकेट, हॉकी, लॉन टेनिस, टेबल टेनिस, बैडमिंटन, खो-खो, तैराकी, एथलेटिक्स व कुश्ती इत्यादि शामिल हों । उन्हें विश्व-स्तर पर होने वाले ओलिंपिक, एशियाइ, एफ्रो-एशियाइ, कॉमनवेल्थ आदि खेल-प्रतियोगिताओं की पूरी जानकारी देकर यह भी बताएँ कि भारत ने तैराकी व एथलेटिक्स में आज तक कोई स्वर्ण पदक नहीं जीता। बच्चों को प्रेरणा दें कि वह प्रतिदिन शाम को खेलने अवश्य जाएँ। यदि वह तेज दौड़ने, कूदने का निरंतर अभ्यास करें तो हो सकता है कि एक दिन वह विश्व स्तर की प्रतिस्पर्द्धाओं में भाग लेकर देश का नाम रोशन करें।

विद्यार्थियों को खेलते समय केवल मुँह से ही नहीं, अपितु नाक से भी साँस लेने का अभ्यास करवाना चाहिए । खेलते समय सदैव रुमाल अपने पास रखना चाहिए, ताकि पसीना आने पर, उसे शरीर से साफ किया जा सके।

शिक्षक को खेल-भावना के बारे में विद्यार्थियों को विस्तार से बताना चाहिए। उन्हें जीतने पर ज्यादा खुशी या अहंकार नहीं होना चाहिए और हारने पर दुखी या हतोत्साहित भी नहीं होना चाहिए, बल्कि हारने पर उन्हें और अधिक मेहनत करके अगली

बार जीतने का प्रयास करना चाहिए । खेल-भावना क अंतर्गत खेलते समय कोई बेईमानी नहीं करनी चाहिए और खेल के किसी नियम का उल्लंघन भी नहीं करना चाहिए। यदि किसी कारणवश आपसे या निर्णायकों से कोई भूल हो गई हो और वह बात आपकी जानकारी में आ जाए तो तुरंत अभी भूल को स्वीकार करके भूल-सुधारकर लेना चाहिए । खेल में कोई भी जीते या हारे लेकिन खेल-भावना की सदैव विजय होनी चाहिए। इस प्रकार की शिक्षा विद्यार्थियों के मन में अच्छी तरह बैठा दें।

(15) **घर वापिस जाना :** शिक्षक को चाहिए कि वह विद्यार्थियों को अपने घर में जो व्यवहार उन्हें करना है, उसके बारे में भी बताएँ। जब विद्यार्थी विद्यालय से घर वापस जाएँ तो माता-पिता सहित घर में सभी का अभिवादन करें। घर के विभिन्न कार्यों में यथाशक्ति सहयोग करें। यदि माता-पिता या घर का कोई भी सदस्य कोई काम कहता है तो उसे सहर्ष करने को उद्धत रहें। ना-नुकर या बहानेबाजी कभी न करें। घर में कोई बीमार हो जाए तो उसका विशेष ध्यान रखें और जितना संभव हो सके तन-मन से उसकी सेवा करें। घर में माता-पिता की सेवा करना और उनकी आज्ञानुसार कार्य करना ही उनकी भक्ति है।

(16) **मनोरंजन :** आज कल घर में मनोरंजन का अर्थ रेडियो, टेप रिकॉर्डर सुनना या टी. वी. देखना मात्र ही रह गया है। शिक्षकों को चाहिए कि वह टी.वी. कार्यक्रमों को देखने में विद्यार्थियों का मार्गदर्शन करें। विद्यार्थियों को कितना और क्या देखना चाहिए और क्या नहीं देखना चाहिए, उसकी पूरी जानकारी उनको समय-समय पर देते रहना चाहिए। शिक्षक उन्हें प्रेरित करें

विद्यार्थियों के लिए श्रम के काम

1. अपने घर में पेड़-पौधे लगाएँ। गमलों में फूल उगाएँ, उन्हें पानी दें। विद्यालय के बगीचे में भी सब काम करें।

2. अपने छोटे कपड़े स्वयं धोएँ, जैसे रूमाल, बनियान, तौलिया आदि। छोटे–छोटे बरतन भी स्वयं माँजें।

3. बस या साइकिल का उपयोग दूर जाने के लिए ही करें। दो-तीन किलोमीटर का मार्ग हो तो पैदल ही चलें।

4. घर के काम–काज में माता-पिता, बहन-भाई का हाथ बटाएँ, विशेषकर दीवाली की सफाई-सजावट में, त्यौहारों पर । घर में किसी के रोगी होने पर। चाय बनाएँ, दूध भी लायें, पानी भी भरें इत्यादि।

5. मेहनत से पढ़ें। विद्यालय से मिला हुआ काम अपने-आप सोचकर लिखें। रोज याद करें।

जाती है। यदि एक चींटी से काम न बने तो दूसरी चींटियों को बुला लेती है। यदि दाना गिर जाय तो चींटी निराश नहीं होती। वह फिर नीचे उतरती है। वह फिर दाने को उठाकर ऊपर ले जाती है। वह तब तक रुकती और थकती नहीं जब तक दाने को अपने घर में नही ले जाती। इसी प्रकार चिड़िया भी एक-एक तिनके से अपना घोंसला बनाती है। हमें चींटी और चिड़िया से श्रम करना सीखना चाहिए।

श्रम के लाभ

श्रम के अनेक लाभ हैं। इससे हमें अनेक काम करने आ जाते हैं। श्रम से हमारा शरीर और मन बलवान बनता है। श्रम से शरीर फुर्तीला बनता है और हमारा जीवन सुखी बनता है। श्रम से मन प्रसन्न होता है। मेहनती मनुष्य को सब लोग पसंद करते हैं। अतः हम सबको श्रम करना चाहिए।

श्रम करने की आदत बचपन से ही डालनी चाहिए। छोटी आयु में जो विद्यार्थी मेहनत से जी चुराते हैं वे कामचोर और आलसी बन जाते हैं। अपने हाथ से काम करने में उन्हें शर्म आती है। उनके अंग कमजोर और शरीर मोटा, ढीला और सुस्त बन जाता है।

इससे उलट जो छात्र बचपन से ही मेहनती बनते हैं वे वीर, साहसी और सफल मनुष्य बनते हैं। कठिन काम को देखकर घबराते नहीं। वे चींटी की तरह काम में जुट जाते हैं और तभी चैन से बैठते हैं जब काम को पूरा कर लते हैं। इसलिए सब विद्यार्थी श्रम करने का प्रण करें।

कि वह अपने खाली समय में अपनी रुचि के अनुसार ड्राइंग, पेंटिंग, क्ले मॉडलिग, किसी संगीत वाद्य यंत्र को बजाने, भजन व गीत गाने और कविता-कहानी लिखने का निरंतर अभ्यास करते रहें, ताकि मनोरंजन के साथ-साथ कुछ सृजनशील और रचनात्मक कार्य भी वे कर सकें; क्योंकि यह उनके व्यक्तित्व में चार चाँद लगा देगा।

(17) **समाज-सेवा :** शिक्षक विद्यार्थियों को समाज के प्रति उनके कर्त्तव्य का बोध भी कराएँ। उन्हें सचेत करें कि वह अपने घर के आस-पास गंदगी न फैलने दें। यदि सफाई नहीं रहती तो संबंधित अधिकारियों को पत्र लिखें और जितनी भी जन-सुविधाएँ उपलब्ध हों सकें, उन्हें दिलवाने का प्रयत्न करें।

विद्यार्थियों को इसके लिए भी प्रेरित करें कि उनके घर में काम करने वाला या घर के आस-पास यदि कोई अनपढ़ है तो उसे वे कम से कम कुछ पढ़ना-लिखना तो सिखा दें। यदि हमारे सभी विद्यार्थी यह कार्य करने लगेंगे तो देश से निश्चय ही निरक्षरता समाप्त हो जाएगी। विद्यार्थियों को चाहिए कि समाज में रहते हुए वह गांधी जी के तीन बंदरों को कभी न भूलें। अपने मुँह से किसी की बुराई न करें, गाली-गलौच या अभद्र भाषा का प्रयोग कभी भी न करें। अपने कानों से किसी की बुराई, चुगली या लड़ाई-झगड़े की बात ना सुनें और न ही अपनी आँखों से बुरा देखें अर्थात् किसी की बुराई पर ध्यान न दें, अपितु उसमें यदि कोई अच्छाई है तो उसको अवश्य ग्रहण करें।

(18) **देश-सेवा :** विद्यार्थियों को देश-सेवा के लिए भी

निरंतर प्रेरित करना शिक्षक का कर्त्तव्य है। यदि कोई विद्यार्थी अपने आस-पास किसी एक अति निर्धन और असहाय व्यक्ति की मदद या सेवा करता है तो यह उसकी देशभक्ति की सबसे बड़ी पहचान है। विद्यार्थी अपने घर के पास किसी भी हस्पताल या स्वास्थ्य केंद्र में जाकर जरूरतमंदों की सेवा कर सकता है। निर्धन रोगियों को खाना या फल आदि बाँट सकता है। वह यह काम अपने जन्मदिन पर या विभिन्न त्योहारों के अवसर पर करके देश-सेवा का पुनीत कार्य कर सकता है।

(19) **पर्यावरण की रक्षा :** शिक्षक विद्यार्थियों को पर्यावरण की रक्षा हेतु प्रेरणा दे। उन्हें प्रेरित करे कि प्रत्येक विद्यार्थी वर्ष में कम से कम एक बार अपने जन्मदिन पर किसी सार्वजनिक जगह पर नीम, पीपल, जामुन, अमलतास इत्यादि का एक पेड़ अपने हाथों से अवश्य लगाए और वर्ष भर उसकी देखभाल करता रहे ताकि सुंदर पर्यावरण का निरंतर निर्माण होता रहे । विद्यार्थी को चाहिए कि वह ध्वनि (शोर) के पर्यावरण का भी ध्यान रखें और अपना स्टीरियो, रेडियो, टी.वी. बहुत कम, जितनी कि सुनने के लिए पर्याप्त हो उतनी आवाज में बजाएँ। स्वास्थ्य और पर्यावरण की रक्षा हेतु सिगरेट-बीड़ी न पिएँ । पान मसाला, तंबाकू का कभी सेवन न करें। उन्हें समझाएँ कि कागज भी पेड़ों से बनता है, अतः जितनी आवश्यकता हो, उतना ही कागज का प्रयोग करें और बिना कारण इसे बरबाद न करें। बिजली, पानी, पेट्रोल इत्यादि का भी उतना ही प्रयोग करें जितनी आवश्यकता हो। किसी भी वस्तु का दुरुपयोग न करने से पर्यावरण सुरक्षित

यदि हम बिना सोचे काम करें तो बुरा फल मिलता है। कई लोग सोचने का श्रम नहीं करते। वे पीछे पछताते हैं। बुद्धि से समझने और याद करने का श्रम होता है। जैसे अध्यापक विद्यार्थियों को श्रम से पढ़ाते हैं। विद्यार्थी श्रम से पढ़ते हैं और श्रम से याद करते हैं। लेखक जब सोच–सोचकर लिखता है तब वह बुद्धि का श्रम करता है। इस प्रकार संसार के बड़े और अच्छे कार्य सोच–समझकर किए जाते हैं।

श्रम की कहानी

एक कौआ था। गर्मियों में उड़ते-उड़ते उसे बहुत प्यास लगी। ढूँढते-ढूँढते उसे एक बरतन दिखाई दिया। जिसके तले में थोड़ा सा पानी था। उसने उसमें से पानी पीना चाहा, पर उसकी चोंच पानी तक न पहुँची।

कौआ अब भी उदास न हुआ और न ही ढीला पड़ा, क्योंकि वह मेहनती था। वह एक-एक कंकर अपनी चोंच में उठाकर बरतन में डालने लगा। ज्यों-ज्यों कंकर पड़ते गए, पानी ऊपर उठता गया। धीरे-धीरे वह बरतन के गले तक पहुँच गया। तब कौए ने पानी पीकर अपनी प्यास बुझाई। यदि वह मेहनत न करता तो प्यासा ही मर जाता। इस प्रकार जो विद्यार्थी मेहनत करता है उसे सुख मिलता है। जो मेहनत नहीं करता है वह दुख पाता हें

श्रम के उदाहरण

हमें श्रम करना चींटी और चिड़िया से सीखना चाहिए। चींटी छोटी-सी होती है। वह अपने से बड़े दाने को उठा ले जाती है। यदि दाना उससे न उठाया जाय तो खींचकर ले

14

महान् गुण : श्रम

मेहनत को श्रम भी कहते हैं। श्रम दो तरह का होता है – शरीर का श्रम और मन-बुद्धि का श्रम। जो श्रम हाथ-पैर से करते हैं वह शरीर का श्रम कहलाता है। जैसे किसान श्रम से खेत में अन्न उगाता है। मजदूर श्रम से पत्थर तोड़ता है। बढ़ई श्रम से लकड़ी को काट छीलकर सामान बनाता है। लोहार श्रम से लोहा काटता है। माली श्रम से क्यारियों में फूल लगाता है। ड्राइवर श्रम से मोटर चलाता है। इस प्रकार दुनिया के अधिकतर कार्य शरीर के श्रम से किए जाते हैं। यदि हम शारीरिक श्रम न करें तो न मकान बनें, न विद्यालय के कमरे तैयार हों, न कपड़े बुने जाएँ, न रोटी पके। अतः जहाँ शरीर के श्रम से काम बनता है वहाँ हमें हाथ पैरों से खूब श्रम करना चाहिए।

दूसरा श्रम मन-बुद्धि का श्रम कहलाता है। मन से हम सोचते हैं। बुद्धि से हम समझते और याद करते हैं। यदि हम सोच-समझकर काम करें तो अच्छा फल मिलता है।

रहता है। ऐसा ज्ञान प्रत्येक शिक्षक को अपने विद्यार्थी को देना चाहिए ।

(20) **रात को सोने से पहले** : शिक्षक विद्यार्थी को यह अच्छी तरह समझा दें कि जल्दी सोना और जल्दी उठना स्वास्थ्य के लिए हितकर है। अतः देर रात तक नहीं जागना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से अगले दिन की दिनचर्या पर बहुत बुरा असर पड़ता है। अतः विद्यार्थी को रात्रि दस बजे तक सो जाना चाहिए।

सोने से पहले माता-पिता की चरण वंदना करना, दिन में अपने द्वारा किए गए सभी कार्यों का आकलन करना और दिन-भर में जहाँ कहीं भी कोई गलती हुई हो, उसका अपने आप निरीक्षण करना और उसको फिर दुबारा ना दोहराने का संकल्प लेकर, ईश्वर को स्मरण करते हुए सो जाना। शिक्षक विद्यार्थी को बताएँ कि कभी भी मुँह ढककर नहीं सोना चाहिए और सोते समय नाक से ही साँस लेना चाहिए ।

उपरिलिखित बीस सामान्य ज्ञान की बातों को विद्यालय के सबसे छोटे बच्चों को यदि छोटी-छोटी कविताओं, गीतों और कहानियों के माध्यम से पढ़ाया जाए तो वह इन्हें प्रसन्नता व तीव्र गति से सीखते हैं। अतः शिक्षक को पढ़ाई में इनका भरपूर प्रयोग करना चाहिए।

4

प्रार्थनाः

निर्भय बनें

ओ३म् अभयं नः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावापृथिवी उभे इमे। अभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तरादधरादभयं नो अस्तु।।

अर्थः

हे भगवन् ! अंतरिक्ष लोक हमारे लिए निर्भयता को उत्पन्न करे। विद्युत् और पृथ्वी हमें निर्भय करें । हमें पीछे से भय न हो, आगे से भय न हो, ऊँचे और नीचे, कहीं से भी हमको भय न हो। हम निर्भय बनें।

मंत्र से अपने आपको उसके समर्पित करें।

अथ समर्पणम्

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयानेन जपोपासनादिकर्मणा धर्मार्थ काममोक्षाणां सद्यः सिद्धिर्भवेन्नः ।

अर्थ : हे परमेश्वर दयानिधे ! आपकी कृपा से जपोपासनादि कर्मों को करके हम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष-सिद्धि को शीघ्र प्राप्त होवें।

नमस्कार मंत्र

ओं नमः शम्भवाय च मयोभवाय च । नमः शंकराय च मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च ।। यजु०१६।४१

अर्थः- सुखस्वरूप परमात्मा के लिए नमस्कार हो। संसार को सर्वोत्तम सुख देने वाले परमात्मा को नमस्कार हो। कल्याण कारक धर्मयुक्त कामों को करने वाले परमात्मा को नमस्कार हो। अपने भक्तों को सुख देकर धर्म के मार्ग पर लगाने वाले प्रभु को नमस्कार हो। अत्यंत मंगलस्वरूप धार्मिक मनुष्यों को मोक्ष-सुख देने वाले परमात्मा को अनेकशः नमस्कार हो।

ओं शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

इस प्रकार **सायं-प्रातः** संधि वेला में अपने मन की शांति व आत्मा की उन्नति के लिए परमात्मा की उपासना करें। यही संध्योपासना है।

को सौ वर्ष तक देखें। उसकी कृपा से सौ वर्ष तक प्राण-धारण करें। उसके गुणों में श्रद्धा और विश्वास रखते हुए उसकी ही सुनें। और उस परमात्मा और उसके गुणों का सौ वर्ष तक उपदेश करें और उसकी कृपा से, उसकी उपासना से, उसके विश्वास से हम सौ वर्ष तक अदीन रहें। कभी किसी के सामने दीन न बनें। सर्वदा परमात्मा की कृपा से हम स्वतंत्र बने रहें। तथा उसके अनुग्रह से सौ वर्ष से भी अधिक समय तक जीवित रहते हुए हम उसके गुणों को सुनें और कहें।

इस प्रकार अत्यंत श्रद्धावान् होकर इन मंत्रों से स्तुति करते हुए परमात्मा की प्रार्थना करें।

तत्पश्चात् शांत मन होकर निम्न गायत्री मंत्र का पाठ करें–

गायत्री (गुरु) मंत्र

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। य० ३६ ।३ । ।ऋ०३ ।६२ ।१० । ।

अर्थः- सर्वरक्षक, प्राणस्वरूप, दुःखों का दूर करने वाले, आनंद देने वाले सच्चिदानंद स्वरूप परमात्मन् समस्त संसार के उत्पादक दिव्यगुणसंपन्न आपके श्रेष्ठतम निष्पाप और शुद्ध विज्ञानस्वरूप को हम धारण करें। आप हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग पर लगावें।

अंत में परमात्मा में अटल श्रद्धा व विश्वास रखते हुए निम्न

5
आर्य कौन है ?

आर्य शब्द का अर्थ निरुक्त में 'ईश्वर पुत्र' दिया है जिसका अभिप्राय यह है कि ईश्वर के सच्चे पुत्रों को 'आर्य' नाम से सम्बोधित किया जाए । एक पिता के कई पुत्र होने पर भी उसकी आज्ञा पर चलने वाले सदाचारी पुत्र को ही वास्तविक पुत्र कहा जाता है। ऐसे ही यद्यपि मनुष्यमात्र ईश्वर के पुत्र हैं तथापि आर्य अर्थात् सदाचारी पुत्र को ही ईश्वर पुत्र का नाम दिया जाता है।

वेद मन्त्रों में सत्य, अहिंसा, पवित्रता आदि उत्तम गुणों को धारण करने वाले को आर्य कहा गया है और सारे संसार को आर्य (श्रेष्ठ) बनाने का उपदेश है। 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' अर्थात् सारे संसार को आर्य बनाओ।

बाल्मीकि रामायण में समदृष्टि रखने वाले और सज्जनता से पूर्ण श्री रामचन्द्रजी को 'आर्य' कहा गया है। विदुरनीति में धार्मिक को, चाणक्य नीति में गुणीजन को, महाभारत में श्रेष्ठबुद्धि वाले को तथा गीता में वीर को आर्य कहा गया हे। धर्म्मपद में कहा गया है कि प्राणियों की हिंसा करने से कोई आदमी आर्य नहीं होता । जो किसी भी प्राणी की हिंसा नहीं करता, वही आर्य होता है।

एमर्सन ने आर्य शब्द की व्याख्या में कहा है कि वही व्यक्ति आर्य होता है जो उदार, निष्ठावान्, सत्यप्रेमी, दयालु और सरल हो, जो अपनी बात का धनी हो, जो परमात्मा और मनुष्य के प्रति सच्चा हो। सुसंस्कृत आर्य मनुष्य वही होता है जो बुद्धिमान हो, सुन्दर गुणों से अलंकृत हो और सामाजिक शक्तिसम्पन्न हो।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने आर्य शब्द की व्याख्या में कहा है "जो श्रेष्ठ गुण, कर्म, स्वभाव वाले मनुष्य हैं वह ही आर्य संज्ञा के संज्ञी हैं।"

गुण – विद्या, विनय, प्रेम व्यवहार, चातुर्य, योक्ष–क्षेम, प्रकृति का ज्ञान और उसके गुणों की पहचान, उनसे लाभ उठाने का सदैव ध्यान, समयानुकूल कार्य करना, जीव और मृत्यु की व्यवस्था को जानकर अधिक शोक, हर्ष में न पड़ना और ईश्वर आज्ञा-भंग से डरना इत्यादि गुण हैं।

कर्म – इन गुणों के प्रसार में सदा उद्योग, इनकी वृद्धि के निमित्त तन, मन, धन का उपयोग, इसके उपाय के लिए सज्जन, गम्भीर और उदार पुरुषों का सहयोग इत्यादि कर्म हैं।

स्वभाव – प्रकृति, सौन्दर्य, ओजस्वी, तेजस्वी, वर्चस्वी, सहनशील, परहित विचार स्वार्थ के वश होकर दूसरों के उपकार का भी ध्यान न आना इत्यादि स्वभाव है।

आर्य संज्ञा वाले व्यक्ति किसी एक स्थान अथवा समाज या जाति में नहीं होते, अपितु वे सर्वत्र पाये जाते हैं। ये लोग प्रत्येक अच्छे कार्य को यज्ञ अर्थात् निस्वार्थ रूप से करते हैं। अच्छे गुणों के स्वामी बनने और उनको व्यवहार में लाने पर भी अभिमान या घमण्ड से दूर रहते हैं। सच्चा आर्य वह है जिसके व्यवहार से सभी को सुख मिलता है, जो इस पृथ्वी पर सत्य, अहिंसा, परोपकार, पवित्रता आदि व्रतों का विशेष रूप से धारण करते हैं।

ओं चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावापृथिवीऽअन्तरिक्ष ँ् सूर्यऽआत्मा जगतस्तस्थुषश्च स्वाहा।।३।। यजु० ७।४२।।

अर्थः- वही दिव्यगुणयुक्त सूर्य समस्त जंगम और स्थावर जगत् की आत्मा है वही ईश्वर द्यु, पृथ्वी और अंतरिक्ष आदि समस्त संसार की रचना कर उसमें पूर्ण होकर उसकी रक्षा करता है। वही विज्ञानमय इन सबका प्रकाशक है। इसलिए सर्वथा द्रोह -रहित मनुष्य समस्त श्रेष्ठ कर्मों में वर्तमान विद्वान् और सर्वप्रकाशक अग्नि का प्रकाशक और सत्योपदेष्टा है। वह दिव्यगुणयुक्त विद्वानों के हृदय में ही उत्कृष्टरूप में प्रकाशित होता है। वह ब्रह्म अवर्णनीय और अद्भुत है। बस यही उसकी सबसे सुंदरतम स्तुति है।

ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳशृणुयाम शरदः शतम्प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् । यजु० ३६/२४

अर्थः- जो सर्वद्रष्टा दिव्यगुण वाले धर्मात्मा विद्वानों का हितकारी है। जो सृष्टि से पूर्व समस्त जगत् का उत्पन्न करने वाला शुद्ध था। वह अब भी ऐसा है और आगे भी प्रलय के पश्चात् सर्वत्र व्याप्त विज्ञानस्वरूप व उत्कृष्ट सामर्थ्यवान् रहेगा। उस परमात्मा

जाता है। सभी एक साथ पढ़ते हैं। महाभारत में भी यह वृतांत आता है कि राजकुमार कृष्ण जिस आश्रम में पढ़ते थे, उसी में गरीब ब्राह्मण का पुत्र सुदामा भी पढ़ता था।

गुरुकुलों में शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थी-जीवन का सर्वांगीण विकास करना होता है। आजकल गुरुकुलों में वेद व शास्त्रों की शिक्षा के अतिरिक्त यथासंभव ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा का भी यहाँ प्रबंध किया जाता है। पहले तो गुरुकुलों में अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग भी सिखाया जाता था। पांडवों और कौरवों जैसे महारथियों की शिक्षा भी आश्रमों में ही हुई थी और तभी वे शस्त्र-अस्त्र चलाने में कुशल हो सके थे।

आजकल आर्यसमाज के सिद्धांतों पर चलने वाले प्रमुख गुरुकुल इस प्रकार है –

गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार; आर्ष गुरुकुल, झज्झर; दयानंद मठ, दीनानगर; वेद-विद्यालय, गौतम नगर, दिल्ली; गुरुकुल करतारपुर; कन्या गुरुकुल, दाधिया; गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर; कन्या गुरुकुल, देहरादून, आदि। इन गुरुकुलों में हजारों छात्र-छात्राएँ अध्ययन कर रह रहे हैं। विद्यार्थियों की रहने-सहने की व्यवस्था का व्यय अधिकतर गुरुकुलों की ओर से होता है। इसमें कोई भेदभाव नहीं रखा जाता। आज हजारों गरीब बच्चे भिन्न-भिन्न गुरुकुलों में इस व्यवस्था से लाभ उठा रहे हैं। इस प्रकार आर्यसमाज अपना कर्तव्य समझकर, शिक्षा का प्रचार एवम् प्रसार निःशुल्क कर रहा है।

घड़ी, पल आदि क्षणों को तथा दिन और रात के विभाग को पूर्व सृष्टियों के अनुसार ही बनाया। उसी सबके विधाता परमात्मा के सब ओर से प्रदीप्त ज्ञानरूप अनंत सामर्थ्य से समस्त विद्याओं का आधार वेद शास्त्र और त्रिगुणात्मक स्थूल और सूक्ष्म जगत् के कारण रूप प्रकृति यथापूर्व उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से प्रलय के बाद होने वाली रात्रि उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से पृथ्वी और अंतरिक्षस्थ समुद्र उत्पन्न हुआ। समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् क्षण आदि काल उत्पन्न हुआ।

इस प्रकार पापानुष्ठान के सर्वथा परित्याग का संकल्प करने के पश्चात् **आचमन मंत्र** से आचमन करें।

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ।। यजु० अ० ३६ । मं० १२ ।।

तदनंतर निम्न **'मनसा परिक्रमा'** के मंत्रों से सर्वत्र सर्व शक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु पिता के समान पालन करने वाले रक्षक परमेश्वर का ध्यान करते हुए अपने मन में दृढ़ आस्तिकता और शक्ति को उत्पन्न करें।

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।१।।

अथर्व० काण्ड ३ सू. २७ मं० १. ।।

अर्थः- जिस ओर उपासक का मुख है अथवा जिस ओर सूर्य

उपस्थान मंत्र

ओ३म् उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्।

देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम् ।।१।। यजु० ३५।१४।

अर्थः- हे परमात्मन् चराचर जगत् के आत्मा तुझको देखते हुए हम उत्कृष्ट श्रद्धावान् होकर आपको प्राप्त हों। हे प्रभो, आप ही स्वप्रकाशस्वरूप सर्वोत्कृष्ट समस्त दिव्यगुणयुक्त पदार्थों में अनंत दिव्यगुणसंपन्न धर्मात्मा और मुमुक्षुओं को सब प्रकार का आनंद देने वाले, जगत् में प्रलय के पश्चात् भी नित्यरूप में विराजमान सर्वानंदस्वरूप और अज्ञानांधकार से सर्वथा पृथक् बहुत दूर हो। प्रभो ! आपकी कृपा से हम आपको प्राप्त कर सकें।

ओ३म् उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः।

दृशे विश्वाय सूर्यम् ।।२।। यजु० ।३३।३१।।

अर्थः- नाना प्रकार के संसार की रचना आदि के नियामक व प्रकाशक परमात्मा के गुण विश्व का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उस समस्त चराचर जगत् की आत्मा चारों वेदों के प्रकाशक और समस्त भूतों में विद्यमान दिव्यगुणयुक्त परमात्मा को सिद्ध करते हैं। इन रचनाओं को देखकर कोई नास्तिक भी ईश्वर का निषेध नहीं कर सकता।

6

वेद

वेद वह ईश्वरीय सत्य ज्ञान है, जो सृष्टि के आरंभ में ईश्वर ने मनुष्यों के लिए ऋषियों द्वारा दिया था। यदि ईश्वर उस समय यह ज्ञान न देता तो मनुष्य स्वयं यह सब कुछ कैसे जान सकता था ? ईश्वर ने यह ज्ञान बीज रूप में दिया। बाद में अपनी बुद्धि से मनुष्य ने समय-समय पर उस मूल ज्ञान के आधार पर नए-नए पदार्थों का ज्ञान प्राप्त किया और नए आविष्कार भी किए। इस बात को स्पष्ट करते हुए महर्षि स्वामी दयानंद ने आर्यसमाज के पहले नियम में ही लिखा है कि, **'सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।'**

ईश्वर ने चार ऋषियों को अलग-अलग वेदों का ज्ञान दिया। ऋग्वेद–जो ज्ञान का विषय है–अग्नि ऋषि को; यजुर्वेद–जिसका विषय कर्म है–वायु ऋषि को; सामवेद–जिसका विषय उपासना है–आदित्य ऋषि को; और अथर्ववेद–जिसका विषय विज्ञान है–अंगिरा ऋषि को दिया। वेदों का ज्ञान ऋषियों को ईश्वर ने समाधि-अवस्था में उनके मन को दिया।

चारों वेदों के ज्ञान को यदि हम संसार का संविधान कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसमें हर प्रकार की सत्यविद्या का

ज्ञान निहित है चाहे वह उपासना और भक्ति हो या प्रकृति के अटल नियमों का विज्ञान हो। संसार में किस प्रकार रहना है, कैसा व्यवहार करना है, किसका क्या कर्त्तव्य है तथा किन नियमों का पालन करना है, इत्यादि सब बातों का विवेचन वेद में विस्तार से विद्यमान है। ईश्वर ने प्राणी मात्र के कल्याण के लिए संविधान के रूप में मानव को वेद-ज्ञान प्रदान किया। क्योंकि वेद-ज्ञान मानवमात्र के लिए है, अतः वेद पढ़ने का अधिकार व धर्म प्रत्येक व्यक्ति का है, चाहे वह स्त्री हो, पुरुष हो या किसी भी जाति, वंश, वर्ण, रंग, रूप, देश का क्यों न हो। स्वामी दयानंद ने आर्यसमाज के नियम तीनं में लिखा है, **'वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।'**

ओ३म् ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पतिरधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्षमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।। ६।।

अथर्व० ३।२७।६।

अर्थः- ऊपर की दिशा का स्वामी महती वेद वाणी व बृहत् ब्रह्मांड का रक्षक परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा आनंद -रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन समस्त जीवों के स्वामी-जड़ता से रक्षा करने वाले आनंद-रूप साधनों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हम लोगों से द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन आनंदों के वश में रखते हैं, जिससे वह जड़ता का निवारण कर हम सबों का मित्र बने और हम उसके मित्र बनें ।।६।।

इस प्रकार छहों **मनसा परिक्रमा** के मंत्रों के अर्थ का ध्यान करते हुए जप करके सर्वशक्तिमान्, सर्वगुरु, न्यायकारी, दयालु, पिता के समान पालन करने वाले, सब दिशाओं में और सब जगह रक्षा करने वाले परमेश्वर का ध्यान करें।

तत्पश्चात् परमात्मशक्ति व उसके स्वरूप का अनुभव कर उसकी अमर गोद में बने रहने की प्रार्थना निम्न **उपस्थान मंत्रों** को बोलकर करें।

वाला न्यायकारी परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा दंड रूप साधनों से समस्त संसार की न्यायपूर्वक रक्षा करता है। उन इन न्याय के स्वामी पापों से रक्षा करने वाले दंड-रूप साधनों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन दंडों के वश में रखते हैं जिससे वे पापों का निवारण कर, हमारे मित्र बनें और हम भी उनके मित्र बनें ।।५।।

ओं ध्रुवा दिग्विष्णुरधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।५।।

अथर्व ३।२७।५।।

अर्थः- नीची दिशा का स्वामी सर्वव्यापक सत्कर्म की प्रतिपादिका वेदवाणी को देने वाला परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह पिता ज्ञान-रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन समस्त चेतन प्राणियों के स्वामी अज्ञानांधकार से रक्षा करने वाले ज्ञान-रूप साधनों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हम लोगों से द्वेष करता है और जिससे हम लोग द्वेष करते हैं उसको इन ज्ञानों के वश में रखते हैं, जिससे वह उस अमर ज्ञान को पाकर हमारा मित्र बन सके और हम उसके मित्र बनें।

7

पंच महायज्ञ

स्वामी दयानंद जी ने श्रेष्ठ कर्मों को यज्ञ कहा है। उन्होंने कहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में प्रतिदिन पाँच महायज्ञ करने चाहिए।

(1) ब्रह्मयज्ञ, (2) देवयज्ञ, (3) पितृयज्ञ, (3) अतिथियज्ञ और

(5) बलिवैश्वदेवयज्ञ।

(1) ब्रह्मयज्ञ : ब्रह्मयज्ञ संध्या को कहते हैं। प्रातः सूर्योदय से पूर्व तथा सायं सूर्यास्त के बाद जब आकाश में लालिमा होती है, तब एकांत स्थान में बैठ कर ईश्वर का ध्यान करना ही ब्रह्मयज्ञ अथवा संध्या कहलाती है।

(2) देवयज्ञ : अग्निहोत्र अर्थात् हवन को देवयज्ञ कहते हैं। यह प्रतिदिन इसलिए करना चाहिए, क्योंकि हम दिनभर अपने शरीर के द्वारा वायु, जल और पृथ्वी को प्रदूषित करते रहते हैं। इसके अतिरिक्त आजकल हमारी मशीनों से भी प्रदूषण फैल रहा है, जिसके कारण अनेक बीमारियाँ फैल रही हैं। उस प्रदूषण को रोकना तथा वायु, जल और पृथ्वी को पवित्र करना हमारा परम कर्त्तव्य है। सब प्रकार के प्रदूषण को रोकने का एक ही मुख्य साधन है और वह है हवन।

अनुसंधानों के आधार पर कहा जा सकता है कि एक हवन से आठ किलोमीटर तक की वायु शुद्ध हो जाती है। हवन में बोले जाने वाले मंत्रों का भी महत्त्व है। इनका मन एवं आत्मा पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इससे मानसिक एवं आत्मिक पवित्रता एवं शांति की प्राप्ति होती है।

(3) **पितृयज्ञ :** जीवित माता-पिता तथा गुरुजनों और अन्य बड़ों की सेवा एवं आज्ञापालन करना ही पितृयज्ञ है।

(4) **अतिथियज्ञ :** घर पर आए हुए अतिथि, विद्वान्, धर्मात्मा, संत-महात्माओं का भोजन आदि से सत्कार करके उनसे ज्ञानप्राप्ति करना ही अतिथियज्ञ कहलाता है।

(5) **बलिवैश्वदेवयज्ञ :** पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि ईश्वर ने हमारे कल्याण के लिए ही बनाए हैं। इनपर दया करना और इन्हें खाना खिलाना बलिवैश्वदेव यज्ञ कहलाता है।

निवारण कर, ज्ञानवान् होकर हमारे मित्र बन सकें और हम उनके मित्र बनें।

ओं प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपतिः पृदाकू रक्षितान्न मिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।३।।

अथर्व ३।२७।३।।

अर्थः- पश्चिम दिशा का स्वामी सर्वोत्तम सबसे स्वीकरणीय सर्वज्ञ परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा भोग रूप साधनों से सब संसार की रक्षा करता है। उन इन सुख के स्वामी जीवन के रक्षक समस्त भोगों की बारंबार स्तुति करते हैं। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उसको उन भोगों के वश में रखते हैं, जिससे दुःख का निवारण कर वे हमारे मित्र बनें और हम भी उनके मित्र बनें ।।३।।

ओ३म् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्वजो रक्षिताऽशनिरिषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।४।।

अथर्व ३।२७।४।।

अर्थः- उत्तर दिशा का स्वामी समस्त जगत् को उत्पन्न करने

उदित होता है वह प्राची दिशा है। इस दिशा का स्वामी ज्ञानस्वरूप बंधनरहित परमात्मा हमारा रक्षक हो। वह परमात्मा किरणों व प्राणरूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन इंद्रियों के अधिपतिरूप शरीर की रक्षा करने वाले प्राणों की बारंबार स्तुति करता हूँ। जो कोई हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं, हम उसको उन प्राणों के वश में रखते हैं। जिससे वह अनर्थ से दूर होकर हमारा मित्र बने और हम उसके मित्र बनें।

ओं दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता पितर इषवः।
तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु।
यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।२।।

अथर्व० ३ । २७ । २ ।।

अर्थः- दक्षिण दिशा का स्वामी परमैश्वर्ययुक्त समस्त चराचर प्राणियों में प्रकाशमान परमात्मा हमारी रक्षा करने वाला हो। वह परमात्मा ज्ञानी सत्य विद्या प्रकाशक विद्वान् रूप साधनों से समस्त संसार की रक्षा करता है। उन इन सत्य विद्याओं के स्वामी सत्ज्ञान से मनुष्यता के रक्षक प्रकाशमय विद्वानों की हम बारंबार स्तुति करते हैं। जो हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उनको उन ज्ञानियों के वश में रखते हैं, जिससे वे अज्ञान का

8

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली

स्वामी दयानंद जी की मृत्यु के बाद सन् 1886 में उनके स्मारक के रूप में डी०ए०वी० संस्था की स्थापना की गई थी। उस में अन्य विषयों के अतिरिक्त हिंदी, संस्कृत, वेद और शास्त्रों की उच्च शिक्षा देने का भी निश्चय किया गया था। परंतु कुछ समय बाद स्वामी श्रद्धानंद, स्वामी दर्शनानंद तथा अन्य अनेक विद्वानों ने देखा कि इन स्कूलों में अभिष्ट शिक्षा देना संभव नहीं है। इसलिए प्राचीन गुरुकुल शिक्षा पद्धति को पुनः शुरू करने का निश्चय किया गया। गुरुकुल शिक्षा प्रणाली में छात्र घर पर न रहकर शिक्षा-केंद्र में ही गुरु के पास रहकर विद्याध्ययन करते हैं।

वैसे तो गुरुकुल शिक्षा प्रणाली बहुत प्राचीन है। श्री रामचंद्र और श्री कृष्णचंद्र आदि सभी गुरुकुलों में ही शिक्षा ग्रहण करते थे। परंतु मध्य काल में यह परिपाटी प्रायः समाप्त हो गई। आधुनिक काल में सबसे बड़ा गुरुकुल स्वामी श्रद्धानंद द्वारा हरिद्वार के पास कांगड़ी में सन् 1902 में खोला गया था। आज यह विश्वविद्यालय के रूप में कार्य कर रहा है।

गुरुकुलों में सबके लिए रहने और शिक्षा की समान व्यवस्था है। राजा-रंक, अमीर-गरीब सभी बच्चों में कोई भेदभाव नहीं रखा

जाता है। सभी एक साथ पढ़ते हैं। महाभारत में भी यह वृतांत आता है कि राजकुमार कृष्ण जिस आश्रम में पढ़ते थे, उसी में गरीब ब्राह्मण का पुत्र सुदामा भी पढ़ता था।

गुरुकुलों में शिक्षा का लक्ष्य विद्यार्थी-जीवन का सर्वांगीण विकास करना होता है। आजकल गुरुकुलों में वेद व शास्त्रों की शिक्षा के अतिरिक्त यथासंभव ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा का भी यहाँ प्रबंध किया जाता है। पहले तो गुरुकुलों में अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग भी सिखाया जाता था। पांडवों और कौरवों जैसे महारथियों की शिक्षा भी आश्रमों में ही हुई थी और तभी वे शस्त्र-अस्त्र चलाने में कुशल हो सके थे।

आजकल आर्यसमाज के सिद्धांतों पर चलने वाले प्रमुख गुरुकुल इस प्रकार है –

गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार; आर्ष गुरुकुल, झज्झर; दयानंद मठ, दीनानगर; वेद-विद्यालय, गौतम नगर, दिल्ली; गुरुकुल करतारपुर; कन्या गुरुकुल, दाधिया; गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर; कन्या गुरुकुल, देहरादून, आदि। इन गुरुकुलों में हजारों छात्र-छात्राएँ अध्ययन कर रह रहे हैं। विद्यार्थियों की रहने-सहने की व्यवस्था का व्यय अधिकतर गुरुकुलों की ओर से होता है। इसमें कोई भेदभाव नहीं रखा जाता। आज हजारों गरीब बच्चे भिन्न-भिन्न गुरुकुलों में इस व्यवस्था से लाभ उठा रहे हैं। इस प्रकार आर्यसमाज अपना कर्तव्य समझकर, शिक्षा का प्रचार एवम् प्रसार निःशुल्क कर रहा है।

घड़ी, पल आदि क्षणों को तथा दिन और रात के विभाग को पूर्व सृष्टियों के अनुसार ही बनाया। उसी सबके विधाता परमात्मा के सब ओर से प्रदीप्त ज्ञानरूप अनंत सामर्थ्य से समस्त विद्याओं का आधार वेद शास्त्र और त्रिगुणात्मक स्थूल और सूक्ष्म जगत् के कारण रूप प्रकृति यथापूर्व उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से प्रलय के बाद होने वाली रात्रि उत्पन्न हुई। उसी सामर्थ्य से पृथ्वी और अंतरिक्षस्थ समुद्र उत्पन्न हुआ। समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् क्षण आदि काल उत्पन्न हुआ।

इस प्रकार पापानुष्ठान के सर्वथा परित्याग का संकल्प करने के पश्चात् **आचमन मंत्र** से आचमन करें।

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ।। यजु० अ० ३६ । मं० १२ ।।

तदनंतर निम्न **'मनसा परिक्रमा'** के मंत्रों से सर्वत्र सर्व शक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु पिता के समान पालन करने वाले रक्षक परमेश्वर का ध्यान करते हुए अपने मन में दृढ़ आस्तिकता और शक्ति को उत्पन्न करें।

ओं प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः ।।१।।

अथर्व० काण्ड ३ सू. २७ मं० १. ।।

अर्थः- जिस ओर उपासक का मुख है अथवा जिस ओर सूर्य

ईश्वर तुम सबसे महान हो। हे दयालु, तुम्हीं सबके उत्पन्न करने वाले हो। हे जनक, तुम्हीं दुष्टों को दंड देने वाले व ज्ञानस्वरूप हो। हे भगवान् तुम्हीं अटल सत्यस्वरूप हो।

इस प्रकार अर्थ-चिंतनपूर्वक प्राणायाम करने के पश्चात् सृष्टि रचना की भावना द्वारा परमेश्वर की स्तुति करते हुए तथा पाप न करने का संकल्प करते हुए निम्न **अघमर्षण मंत्र** पढ़ें।

ओ३म् ऋतं च सत्यंञ्चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत ।
ततो रात्र्य जायत ततः समुद्रो अर्णवः ।१।
ओ३म् समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो अजायत।
अहो रात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ।२।
ओ३म् सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः।३।

ऋग्वेद मं० १० / सूक्त १६०

हे प्रभो ! आप सब जगत् का धारण और पोषण करने वाले सब को वश में करने वाले हैं । परमेश्वर ने पहली सृष्टियों में जिस प्रकार की रचना की, उसी प्रकार जीवों के पुण्य और पाप के अनुसार वह प्राणी-देह व अन्य सृष्टि को बनाता है। उसी ने सूर्य और चंद्र लोक सर्वोत्तम स्वप्रकाश, अग्नि, पृथ्वी, द्यु और पृथ्वी के बीच में वर्तमान आकाश और उनमें रहने वाले लोकों को बनाया। उसी सब को वश में रखने वाले परमात्मा ने समस्त

9

डी०ए०वी० अभियान

'डी०ए०वी०'-'दयानंद ऐंग्लो वैदिक' का संक्षिप्त रूप है। यह संस्था प्राचीन भारतीय संस्कृति के नैतिक मूल्यों का तथा आधुनिक वैज्ञानिक शिक्षा का सम्यक् मेल कर समाज की आध्यात्मिक तथा भौतिक उन्नति करने के लिए गतिशील है। इसकी स्थापना स्वामी दयानंद जी की मृत्यु के उपरांत उनके स्मारक के रूप में आर्यसमाज के आठवें नियम '**अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए**' की पालना के लिए की गई थी। डी०ए०वी० में विद्यार्थियों में भारतीय संस्कृति और राष्ट्रभक्ति की भावना को उत्पन्न करने, हिंदी तथा संस्कृत के प्रचार के लिए तथा वेदों के आधार पर शिक्षा की व्यवस्था की गई थी।

डी०ए०वी० की स्थापना महात्मा हंसराज, पं. गुरुदत्त, लाला लाजपतराय, लाला साईंदास आदि स्वामी दयानंद जी के अनुयायियों

ने सन् 1886 में लाहौर (अब पाकिस्तान) में की थीं। इस समय डी०ए०वी० संस्थाओं का प्रबंध डी०ए०वी० कॉलेज मैनेजिंग कमेटी की ओर से होता है, जिसका मुख्य कार्यालय चित्रगुप्त रोड, पहाड़गंज, नई दिल्ली में स्थित है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए डी०ए०वी० संस्था ने देश–विदेश में एक हजार से अधिक स्कूल एवम् कॉलिज स्थापित किए हैं और लगभग दस लाख विद्यार्थी इन विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। प्रत्येक स्कूल में यज्ञशाला तथा धर्मशिक्षण का भी प्रबंध किया गया है। हर विद्यालय में नियमित रूप से यज्ञ और धर्म-शिक्षा का अध्यापन होता है। इन विद्यालयों के द्वारा बच्चों के चरित्र निर्माण के लिए शिविर भी आयोजित किए जाते हैं।

ओं तपः पुनातु पादयोः । (दोनों पैरों पर।)

हे प्रभो ! आप सत्यधर्म के आचरण करने वाले हो। आपकी इस पवित्र शक्ति को पाकर मेरे दोनों पैर सन्मार्ग में बढ़ते हुए मेरा कल्याण करने वाले हों।

ओं सत्यं पुनातु पुनः शिरसि । (सिर पर।)

हे सत्यस्वरूप ! आपकी शक्ति को पाकर मेरे सिर की सभी शक्तियाँ पवित्र एवं सत्यमय होकर मेरा कल्याण करें।

ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र । (समस्त अंगों पर।)

हे भगवान् ! आप व्यापक और सबसे बड़े हो। मैं भी आपकी इसी शक्ति से पवित्र होकर सब जगह हितकारी और ज्ञानी बना रहूँ।

मार्जन के पश्चात् निम्न मंत्र का जप करते हुए सत्यार्थप्रकाश के तृतीय समुल्लास में लिखित विधि के अनुसार कम से कम तीन प्राणायाम करें। नाभि के नीचे से मूलेंद्रिय के ऊपर संकोच करके हृदय के वायु को बल से बाहर निकाल के यथाशक्ति रोके रहें । पश्चात् धीरे-धीरे वायु अंदर लेके अंदर ही थोड़ा-सा रोकें । इस प्रकार यह एक ही प्राणायाम हुआ।

प्राणायाम मंत्राः

ओं भूः । ओं भुवः । ओं स्वः । ओं महः । ओं जनः ।
ओं तपः । ओं सत्यम् ।। तैत्ति० १० । २७।।

अर्थः- हे प्रभो, तुम सुखस्वरूप हो। हे जगदीश्वर, तुम दुखों को दूर करने वाले हो। हे जगत्पिता, तुम आनंदस्वरूप हो। हे

मार्जन मंत्र

निम्न मंत्र से हथेली में जल लेकर दाएँ हाथ की मध्यमा व अनामिका अंगुलियों से यथाक्रम इंद्रियों का मार्जन करें अर्थात् जल छिड़कें।

ओं भूः पुनातु शिरसि । (इस मंत्र से सिर पर।)

हे प्रभो ! मेरा मस्तिष्क इस प्रकार पवित्र हो कि मैं अपना और पराया कल्याण करूँ।

ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः। (इस मंत्र से दोनों नेत्रों पर।)

हे प्रभो ! आप दुःखों के दूर करने वाले हो। मेरी आँखें भी आपसे पवित्र शक्ति को पाकर पवित्र दृष्टि वाली व हितकारिणी हों।

ओं स्वः पुनातु कण्ठे । (गले पर।)

हे जगदीश्वर ! तुम महान् हो। आपकी इस महत्ता को प्राप्त करके मेरा कंठ भी विशाल व सर्वहितकारी हो।

ओं महः पुनातु हृदये । (हृदय पर।)

हे प्रभो ! मेरा हृदय पवित्र होवे जिससे मैं विशाल हृदय वाला बनूँ।

ओं जनः पुनातु नाभ्याम् । (नाभि पर।)

हे ईश्वर ! आप सबके उत्पादक हो। आपकी इसी उत्कृष्ट शक्ति को प्राप्त होकर मेरा स्नायु बंधन भी उत्कृष्ट संतानें देकर वीर्यशाली व समाज व राष्ट्र का हितकारी हो।

10

आर्य समाज के अनमोल रत्न
स्वामी दयानंद सरस्वती

भारत के इतिहास में माता, पिता तथा गुरु की आज्ञा पालने वालों का एक विशेष स्थान है। श्रवणकुमार ने अपने कंधे पर माता-पिता को बहँगी में बिठाकर सारे भारत के तीर्थों के दर्शन कराए थे। श्रीराम ने पिता की आज्ञा पूर्ण करने के लिए चौदह वर्ष का वनवास काटा था। देवव्रत (भीष्म पितामह) पिता के सुख के लिए आजीवन ब्रह्मचारी रहे। अर्जुन ने गुरू द्रोणाचार्य की आज्ञा पूरी करने के लिए राजा द्रुपद को बंदी बनाया था। एकलव्य ने उन्हें गुरुदक्षिणा के रूप में अपना अँगूठा ही भेंट कर दिया था। स्वामी दयानंद जी ने इस परंपरा में गुरु की आज्ञा पालने के लिए संपूर्ण जीवन दान देकर एक नया अध्याय जोड़ दिया।

स्वामी दयानंद सरस्वती जी आर्यसमाज के संस्थापक, दलितोद्धारक, वेदोद्धारक, समाज-सुधारक और युग-प्रवर्तक थे।

स्वामी दयानंद जी का जन्म फाल्गुन वदी दशमी, संवत 1880 विक्रमी तद्नुसार सन् 1824 में गुजरात प्रांत के टंकारा गाँव में हुआ था। उनका बचपन का नाम मूलशंकर तथा उनके पिता का नाम श्री कर्षन जी तिवाड़ी था। बचपन में उन्होंने

पिताजी के कहने पर शिवरात्रि का व्रत रखा था। पिताजी ने उन्हें कहा कि शिवरात्रि का व्रत रखने और रात्रि में जागरण करने से शिव प्रसन्न होकर दर्शन देते हैं। इस बात का मूलशंकर पर बहुत प्रभाव पड़ा और उन्होंने दिनभर कुछ भी खाया-पिया नहीं और रात्रि में शिवमंदिर जाकर शिवलिंग की पूजा-अर्चना करके जागरण करने लगे। बाकी भक्त सो गए, किंतु मूलशंकर जागता रहा। अचानक मध्य रात्रि में चूहे आए तथा मलमूत्र से मूर्ति को गंदा करने लगे और शिवमूर्ति पर चढ़ाए हुए प्रसाद को खाने लगे। मूलशंकर के मन में प्रश्न उत्पन्न हुआ कि 'यह कैसा शिव है जो अपनी भी रक्षा नहीं कर पा रहा? यह हमारी क्या रक्षा करेगा?' वे समझ गए कि यह सच्चा शिव नहीं है। इस घटना के बाद मूर्तिपूजा से उनकी श्रद्धा समाप्त हो गई और वे सदैव सच्चे शिव के दर्शन के विषय में सोचने लगे।

वह अपनी बहन व चाचा से अपार प्रेम करते थे, लेकिन बहन और चाचा की मृत्यु की घटना ने उनके मन पर बहुत गहरा प्रभाव डाला। चाचा उनसे बहुत प्यार करते थे। चाचा की मृत्यु से उनके मन में अनेक प्रश्न उत्पन्न हुए, जैसे – मृत्यु क्या है ? क्या मृत्यु पर विजय नहीं पाई जा सकती? क्या सबको मृत्यु नष्ट कर देती है ? क्या एक दिन मुझे भी मृत्यु का ग्रास बनना पड़गा। इस घटना के कारण उन्हें संसार से वैराग्य हो गया।

चाचा की मृत्यु के पश्चात् मूलशंकर ने सच्चे शिव के दर्शन के लिए और मृत्यु पर विजय पाने के लिए गृह त्याग कर दिया। घर छोड़ने के बाद मूलशंकर शुद्ध चैतन्य ब्रह्मचारी कहलाने लगे।

ओं श्रोत्रं श्रोत्रम् ।

(दोनों कानों का पहले दायाँ फिर बायाँ भाग।)

हे जगदीश्वर ! आपकी दया से मेरे कानों में श्रवणशक्ति बनी रहे।

ओं नाभिः । (नाभि का।)

हे प्रभु ! मेरे स्नायु केंद्र में सब अंगों को वश में रखने की शक्ति बनी रहे।

ओं हृदयम् । (हृदय का।)

हे दयामय ! आपकी कृपा से मेरे हृदय में शरीर को क्रियाशील रखने की शक्ति बनी रहे।

ओं कण्ठः। (गले का।)

प्रभो ! मेरे कंठ में प्राणशक्ति बलवान् बनी रहे।

ओं शिरः। (शिर का।)

हे देव ! मेरे शिर की सभी शक्तियाँ क्रियाशील बनी रहें।

ओं बाहुभ्यां यशोबलम् ।

(दोनों भुजाओं के मूल स्कंध।)

हे ईश्वर ! मेरी दोनों भुजाएँ मेरी कीर्ति और बल की आधार हों।

ओं करतलकरपृष्ठे ।

(दोनों हथेलियों का।)

हे प्रभो ! हथेली के समान मेरे सन्मुख रहने वाली मेरी शक्तियाँ मेरा कल्याण करने वाली हों और हथेली के पृष्ठ भाग के समान अदृष्ट शक्तियाँ भी मेरा हितसाधन करें।

आचमन मंत्र

ओं शन्नो देवीरभिष्टयऽआपो भवन्तु पीतये।

शंयोरभिस्त्रवन्तु नः ।। यजु० अ० ३६ । मं० १२ ।।

अर्थः- दिव्यगुणयुक्त, सर्वप्रकाशक, सर्वानंदप्रद, सर्वव्यापक परमात्मा अभीष्ट आनंद की प्राप्ति के लिए, और पूर्णानंद के भोग द्वारा तृप्ति के लिए, हमारे लिए कल्याणकारी हों। और वह परमेश्वर हम पर सुख की वर्षा करे।

तत्पश्चात् निम्न मंत्र से परमात्मा से अंगों में शक्ति की प्रार्थना करते हुए, केवल मध्यमा और अनामिका अंगुलियों से जल स्पर्श करके अपने निम्न अंगों का यथाक्रम स्पर्श करें।

ओं वाक् वाक्।

(इस मंत्र से मुख का दायाँ (Right) फिर बायाँ (Left) भाग।)

हे प्रभो ! आपकी कृपा से मेरी वाणी में वाक्शक्ति बनी रहे।

ओं प्राणः प्राणः।

(इससे नासिका का पहले दायाँ फिर बायाँ।)

हे प्रभो ! आपकी दया से मेरे प्राणों में जीवन-शक्ति बनी रहे।

ओं चक्षुश्चक्षुः।

(दोनों आँखों का पहले दायाँ फिर बायाँ भाग।)

हे भगवान् ! आपकी स्नेह-शक्ति से मेरी दोनों आँखों में दृष्टि-शक्ति बनी रहे।

शुद्ध चैतन्य को सन्यास की दीक्षा देने वाले स्वामी पूर्णानंद सरस्वती थे। सन्यासी बनने के बाद उनका नाम स्वामी दयानंद सरस्वती रखा गया और एक दिन 'मैं क्या हूँ? शिव कौन है?' यह जानने के लिए वे प्रज्ञाचक्षु स्वामी विरजानंद की कुटी पर पहुँचे। जब द्वार खटखटाया तो अंदर से आजा आई, 'कौन है?' स्वामी दयानंद ने उत्तर दिया, 'यही जानने के लिए तो आया हूँ।' गुरु ने समझ लिया कि आवाज एक सच्चा शिष्य मिला है। गुरु जी ने प्रेम से उन्हें संस्कृत और वेद की शिक्षा दी । शिक्षा पूर्ण होने पर गुरु दक्षिणा में गुरु की प्रिय वस्तु लौंग लेकर वे उनके चरणों में उपस्थित हुए।

गुरुवर विरजानंदजी महाराज ने स्वामी दयानंद को कहा, कि 'दयानंद मैं तो तुमसे कुछ और ही गुरुदक्षिणा चाहता हूँ। आज देश गुलाम है और समाज कुरीतियों और कुप्रथाओं की दलदल में फँसा है। धर्म के नाम पर अंधविश्वास का बोलबाला है। इसे दूर करो ओर सत्य सनातन वैदिक धर्म का प्रचार करो।' स्वामी दयानंद ने समस्त जीवन गुरु की इसी आज्ञा को पूर्ण करने में लगा दिया। उनका जीवन वेद-यज्ञ की आहुति बन गया। वे जीवन के अंतिम क्षण तक वैदिक धर्म के शुद्ध स्वरूप के प्रचार में ही लगे रहे।

मथुरा से ग्वालियर, करौली, जयपुर, पुष्कर आदि से लेकर पूरे भारत का भ्रमण करते हुए कई स्थानों पर पंडितों, मौलवियों और पादरियों से शास्त्रार्थ करते रहे। स्वामी दयानंद हरिद्वार के कुंभ में पहुँचे और वहाँ सप्तसरोवर पर पाखंड खंडिनी पताका

लगाकर मूर्तिपूजा का खंडन शुरू कर दिया। इससे सारे मेले में एक प्रकार की हलचल मच गई। जनता महर्षि के वचनों से प्रभावित हो रही थी। भागवत के खंडन में स्वामी जी द्वारा लिखित पुस्तक की हजारों प्रतियाँ वहाँ बाँटी गईं। पर जनता की अंधी श्रद्धा दूर नहीं हुई। स्वामी जी ने सोचा कि मेरी तपस्या में कमी है। गंभीर चिंतन के बाद वे अपना सर्वस्व अर्थात् वस्त्र, पुस्तक, धन जो कुछ उनके पास था सब कुछ जनता को अर्पित करके केवल एक वस्त्र में कुटिया से बाहर निकल पड़े। उन्होंने मोनव्रत-धारण किया और गंगा के किनारे बैठ, ब्रह्मचिंतन में लीन हो गए। अढ़ाई वर्ष तक उन्होंने कठोर तपस्या की।

तप से तप कर स्वामी जी फिर अंधविश्वास के विरुद्ध निकल पड़े। व्याख्यान से बचे समय को वे लोगों को संध्या और गायत्री सिखाने में, मनुस्मृति और उपनिषद् पढ़ाने में, यज्ञ करने और यज्ञोपवीत देने में खर्च करते थे। अनुपशहर में पंडितों ने पराजय स्वीकार कर मूर्तिपूजा छोड़ दी, कंठियाँ तोड़ दीं। स्वामी जी के कुछ विरोधियों ने उन्हें पान में विष दिया, पर इन्होंने योग क्रिया से विष को शरीर से निकाल दिया। स्वामी जी के भक्त मुसलमान तहसीलदार सैयद मुहम्मद ने अपराधी को पकड़कर जेल में डाल दिया और उसे कठोर दंड देने की इच्छा प्रकट की। ऋषि ने उत्तर दिया। 'मैं संसार को कैद कराने नहीं वरन् कैद से छुड़ाने आया हूँ।'

इसके पश्चात् स्वामी जी मिर्जापुर, बिजनौर, गढ़मुक्तेश्वर, फर्रूखाबाद, झाँसी, बुलंदशहर, कासगंज, पीलीभीत, बरेली आदि

तो समझना चाहिए कि मन नहीं लग रहा। और मन को बार-बार उसमें लगाने का प्रयत्न करना चाहिए।

विधि

संध्या-रात्रि और दिन की दोनों संधि बेलाओं में करनी चाहिए। इसके प्रारंभ करने के पूर्व भूमिका रूप में तैयारी करने के लिए पहले स्नानादि द्वारा शरीर-शुद्धि तथा राग द्वेष, चिंतादि सब दुर्भावनाओं से मन को मुक्त कर लेना चाहिए। यदि आलस्यादि आएँ तो मार्जन करें। तदनंतर मन को एकाग्र व शरीर में चेतना लाने के लिए कम से कम तीन प्राणायाम कर लें ।

गायत्री मंत्र

ओं भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात् ।। यजुर्वेद ३६ ।३।

अर्थः- सर्वरक्षक, प्राणस्वरूप, दुःखों को दूर करने वाले, आनंद देने वाले, सच्चिदानंदस्वरूप परमात्मन्, समस्त संसार के उत्पादक, दिव्यगुण संपन्न आपके श्रेष्ठतम निष्पाप और शुद्ध विज्ञानस्वरूप को हम धारण करें। आप हमारी बुद्धियों को सन्मार्ग पर लगाएँ।

गले के कफ आदि दोष साफ़ करने के लिए सर्वप्रथम दायीं हथेली में जल लेकर निम्न मंत्र से (अर्थ विचारपूर्वक) तीन आचमन करें।

13
वैदिक संध्या

संध्या के विषय में निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिएः–

1. 'संध्या' शब्द स्वयमेव बताता है कि इसमें ध्यान, मानसिक एकाग्रता तथा मौन मुख्य हैं। अतः बोलकर संध्या करना, या समूह में मिलकर संध्या करना अवैदिक तथा अनुपयोगी है।

2. संध्या सदा एकांत तथा शांत वातावरण में करनी चाहिए, जहाँ मन स्थिर रह सके।

3. संध्या में मन को एकाग्र करने का सबसे उत्तम उपाय उन मंत्रों के अदृश्य अर्थों पर अपने मन को लगाना है। अतः अर्थ की भावना करते हुए मंत्र का जप मन में करना चाहिए और जब कभी ऐसा प्रतीत हो कि मंत्र के जप के साथ अर्थ का बोध नहीं हो रहा

नगरों में प्रचार करते हुए कर्णवास पहुँचे। बुलंदशहर का अंग्रेज कलेक्टर स्वामी जी का भक्त हो गया था और उनके दर्शन करने आया करता था। कर्णवास का ठाकुर कर्णसिह चक्रांकित संप्रदाय का था। स्वामी जी के खंडन से कुपित होकर उसने उन पर तलवार से आक्रमण किया। स्वामी जी ने उससे तलवार छीनकर उसके दो टुकड़े कर दिए। कर्णसिंह ने दोबारा तीन सेवकों को भेजकर रात में स्वामी जी पर आक्रमण करने की कोशिश की, पर उसे सफलता नहीं मिलीं

कानपुर, रामपुर, कन्नौज आदि में मूर्तिपूजा का खंडन कर स्वामी दयानंद फिर काशी पहुँचे और वहाँ के पंडितों को शास्त्रार्थ में हराया। काशी में कुछ मुसलमानों ने भी इसलाम के खंडन से चिढ़कर इन्हें गंगा में फेंकने का प्रयत्न किया, पर उन्हें मुँह की खानी पड़ी। मिर्जापुर में वैदिक पाठशाला की स्थापना करके स्वामी जी प्रयाग के कुंभ मेले में पहुँचे। वहाँ ब्रह्म समाज के संस्थापक श्री देवेंद्रनाथ ठाकुर (कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर के पिता) से उनकी भेंट हुई। इसके पश्चात् मुगलसराय, पटना, भागलपुर आदि नगरों में होते हुए स्वामी जी कलकत्ता पहुँचे। वहाँ ब्रह्म समाज के नेता बाबू केशवचंद्र सेन ने उन्हें वस्त्र पहनने और हिंदी में भाषण करने का सुझाव दिया, जो महर्षि ने सहर्ष स्वीकार कर लिया । अब तक वे संस्कृत में भाषण करते थे और केवल कौपीन धारण करते थे।

'सत्यार्थप्रकाश' का लेखन स्वामी जी ने सन् 1874 में प्रारंभ किया और उसका प्रथम संस्करण 1875 में प्रकाशित हुआ। इस

ग्रंथ ने देश में एक जबरदस्त वैचारिक क्रांति पैदा की। इसके पश्चात् 'संस्कार विधि', 'ऋग्वेदादिभाष्याभूमिका' तथा 'वेदभाष्य' का लेखन और उपदेश भ्रमण के साथ–साथ चलता रहा।

बंबई के आर्य सज्जनों के अनुरोध पर स्वामी जी ने बंबई में शनिवार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा संवत् 1932 विक्रमी (10 अप्रैल, 1875) को आर्यसमाज की स्थापना की। उस समय इसके एक सौ संस्थापक सदस्य तथा अट्ठाईस नियम थे। आर्यसमाजों की स्थापना करने के लिए स्वामी जी पंजाब के सभी प्रमुख नगरों लुधियाना, जालंधर, अमृतसर, बटाला, गुरुदासपुर, लाहौर आदि गए व उन्होंने इन नगरों में आर्यसमाजों की स्थापना की। इसी वर्ष दिल्ली दरबार था। स्वामी जी ने विभिन्न मतावलंबियों यहाँ तक की मुसलमानों के नेता सर सैयद अहमदखाँ से भी मिलकर यह प्रयत्न करना चाहा कि देश के सभी धार्मिक गुरु धर्म के सर्वसम्मत सनातन सिद्धांत का प्रचार करें, किंतु उनकी यह योजना सफल नहीं हो सकी।

जालंधर में स्वामी जी ब्रह्मचर्य की महिमा पर बोले। वहाँ सरदार विक्रम सिंह ने उनमें ब्रह्मचर्य की शक्ति का कोई प्रमाण देने की बात कर दी। सभा की समाप्ति पर जब सरदार साहब अपनी चार घोड़ों वाली बग्घी पर जाने लगे तो स्वामी जी ने उन्हें बिना बताए पीछे से बग्घी को पकड़ लिया। कई चाबुक लगाने पर भी जब घोड़े आगे न बढ़ पाए तो उन्होंने पीछे देखा तो स्वामी जी ने बग्घी को पीछे से पकड़ रखा है। इससे न केवल उन्हें अपितु वहाँ की सभी जनता को ब्रह्मचर्य के बल पर विश्वास हो गया।

कंस का वध करके कृष्ण बंदीगृह पहुँचे और माता-पिता को कारागार से छुड़ाया। उन्होंने अपने नाना को गद्दी पर बिठाया।

इस प्रकार कृष्ण ने ब्रजभूमि में सच्चे अर्थों में प्रजातंत्र स्थापित किया। उग्रसेन राजा नहीं थे, अध्यक्ष थे। मथुरा को स्वतंत्र कराकर भी श्रीकृष्ण वहां नहीं रहे, अपितु उन्होंने द्वारकापुरी में अपना राज्य स्थापित किया।

साढ़े तीन हजार टुकड़ों में बँटे हुए इस भारत राष्ट्र को अखंड बनाने के लिए श्रीकृष्ण महाभारत के युद्ध में अर्जुन के सारथी बने। उसके मोह में पड़ जाने पर गीता का उपदेश देकर उसे धर्मयुद्ध के लिए तैयार किया। कौरव पक्ष में भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण तथा दुर्योधन जैसे वीरों के होते हुए विजय पांडवों की हुई। इसका सारा श्रेय श्रीकृष्ण को ही प्राप्त है। उनकी नीति सच्चाई के पक्ष में थी। इस धर्म-युद्ध में उन्होंने धर्म के पक्ष को ही विजय दिलाई और पांडवों के नेतृत्व में इस राष्ट्र को अखंडता प्राप्त कराई।

पर्वत ने गोकुलवासियों को न केवल गोधनवृद्धि में ही सहयोग किया, अपितु उन्हें वर्षा के प्रकोप से भी बचाया।

कृष्ण 16 वर्ष के हुए। अब वे अपने नाना के राज्य के उत्तराधिकारी थे । मथुरावासी उन्हें बुलाने के लिए अक्रूर जी को दूत के रूप में भेजते हैं। उन्हें बलराम और श्रीकृष्ण का इंतजार था। फौज भी विद्रोह करने को तैयार थी। लोग कंस के अत्याचारों से मुक्ति चाहते थे।

उधर गोकुलवासी नहीं चाहते कि कृष्ण और बलराम उन्हें छोड़कर मथुरा जाएँ परंतु जीवन में ऐसे अवसर भी आया करते हैं जब एक महान् उद्देश्य के लिए अपने निजी प्रिय संबंधी को छोड़ना ही पड़ता है। कृष्ण को भी इन्हें छोड़ना पड़ा और कंस-वध के निए मथुरा जाना पड़ा।

मथुरा निवासियों ने जय-जयकार के साथ श्रीकृष्ण का स्वागत किया। यह जय-जयकार तीव्र से तीव्रतर होती गई । कंस के देखते ही देखते उस आवाज ने महल को चारों ओर से घेर लिया। भयभीत कंस ने फौज और पुलिस को पुकारा, परंतु वे तो सब के सब श्रीकृष्ण की सेना में जा चुके थे। कंस के जिन विश्वस्तों ने कृष्ण की जान लेनी चाही, वे निष्प्राण कर दिए गए। चाणूर और मुष्टिक जैसे पहलवानों को भी जान से हाथ धोने पड़े। कृष्ण आगे बढ़े, उन्होंने कंस को गर्दन से पकड़ा। कंस के प्राण–पखेरू उड़ गए। मथुरा की जनता ने सुख का साँस लिया।

स्वामी जी प्रचार और लेखन कार्य करते रहे। मेरठ में स्वामी जी ने परोपकारिणी सभा की स्थापना की। अजमेर स्थित परोपकारिणी सभा स्वामी जी की पुस्तकों का प्रकाशन और प्रचार– कार्य करती है।

इन दिनों महर्षि का ध्यान राजस्थान के राजाओं को सुधारने तथा संगठित करने की ओर गया। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वामी जी अजमेर में आर्यसमाज को स्थापित करके रियासत मसूदा, रायपुर, बनेड़ा, चित्तौड़, शाहपुर गए। बंबई में फिर पहुँचने पर स्वामी जी ने कृषि प्रधान देश की खुशहाली एवं स्वास्थ्य के विचार से गोरक्षा आंदोलन को जन्म दिया। 'गोकरुणानिधि' पुस्तक इन्हीं दिनों लिखी गई। स्वामी जी गोहत्या बंद कराने के लिए महारानी विक्टोरिया को एक करोड़ भारतीयों के हस्ताक्षर वाला आवेदन–पत्र देना चाहते थे, जो उनके असामयिक निधन के कारण पूर्ण न हो सका।

इसी समय महर्षि ने सब जगह हिंदी भाषा को अपनाने और उसे राजकार्य की भाषा बनाने के लिए भी आंदोलन शुरू किया। वे हिंदी को आर्य-भाषा के नाम से पुकारते थे। वे चाहते थे कि सभी भारतीय संस्कृत तथा हिंदी इन दोनों भाषाओं को अवश्य पढ़ें। उदयपुर के महाराजा पर ऋषि के उपदेशों का बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। उन्होंने स्वामी जी से छंदशास्त्र, मनुस्मृति, राजधर्म और संस्कृत-व्याकरण सीखां

उदयपुर से स्वामी जी जोधपुर पहुँचे। वहाँ का राजा जसवंत सिंह दुर्व्यसन में फँसा था। स्वामी जी अपने उपदेशों में क्षत्रियों

के चरित्र-शोधन, राजधर्म, गोरक्षा की आवश्यकता तथा ब्रह्मचर्य पालन पर बल देते थे। एक दिन उन्होंने राजा से स्पष्ट कह दिया, 'तुम क्षत्रिय हो, नीच कर्म क्यों करते हो?'

स्वामी जी के ये शब्द राजा की उस वेश्या को चुभ गए जिस पर राजा आसक्त था। उसने उनके रसोइया जगन्नाथ के हाथ से दूध में विष मिलाकर स्वामी जी को पिलवा दिया। आधी रात को ऋषि की आँख खुली। वे समझ गए कि मुझे विष दिया गया है। जगन्नाथ ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया। क्षमाशील ऋषि ने उसे क्षमा कर दिया और जान बचाने के लिए नेपाल की सीमा में चले जाने को कहा तथा उसे उसके मार्गव्यय के लिए पच्चीस रुपये भी दे दिए।

ऋषि इस विष से भी जीवित बच जाते, किंतु डॉक्टरों के षड़यंत्र से उनका रोग बिगड़ गया। इन दिनों स्वामी जी के भक्त सरकारी डॉक्टर लक्ष्मणदास जो अजमेर में थे, स्वामी जी की चिकित्सा करने आबू पहुँचे। उनकी चिकित्सा से स्वामी जी को आराम होने लगा। उन्होंने अपनी छुट्टी बढ़ाने के लिए प्रार्थना-पत्र भेजा तो अंग्रेज अफसर ने अस्वीकार कर दिया। इस पर डॉक्टर ने त्याग-पत्र दे दिया, किंतु उनका त्याग-पत्र भी स्वीकार नहीं किया गया।

महर्षि को 2 अक्टूबर को अजमेर वापस लाया गया। वे मसूदा जाना चाहते थे, किंतु भक्तों ने इस हालत में उन्हें वहाँ ले जाना उचित नहीं समझा। 30 अक्टूबर को दीपावली थी और उसी दिन उनकी स्थिति और बिगड़ गई। उनकी चिकित्सा के

के अनुसार पुत्री तो राज्य की अधिकारिणी नहीं होती थी, किंतु पुत्री का पुत्र अधिकारी अवश्य होता था। जरासंध की शह पाकर कंस ने अपने पिता के रहते ही मथुरा के शासन पर अधिकार जमा लिया। इस अवस्था में प्रजा बेबस थी। कंस ने निश्चय कर लिया कि वह देवकी के पुत्रों को जीवित नहीं रहने देगा। परंतु प्रजा सावधान थी। उसने कंस की चाल का मुकाबला किया।

जनता ने सत्य और न्याय की रक्षा के लिए जोखिम उठाया। वह मथुरा के शासन का उत्तराधिकारी कंस को नहीं देवकी के पुत्र को मानती थी। देवकी के जेल में होने से वह सब कुछ देकर भी देवकी के पुत्र की रक्षा करने को तैयार हो गई। जनता के पहले प्रयत्नों की असफलता ने उसके संकल्प को कमजोर नहीं किया। देवकी के पुत्र की रक्षा हेतु नंद ने अपनी नवजात बालिका को कंस की भेंट करने का मन बनाया। जेल के द्वार खुल गए। पहरेदारों ने स्वयं मार्ग दे दिया। नंदबाबा को श्रीकृष्ण के धर्मपिता बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

बालक कृष्ण ने होश सँभालते ही अपने मित्रों के साथ मिलकर गोकुल का मक्खन शहर में जाना बंद करा दिया तथा इस दही–मक्खन की वृद्धि के लिए गोवर्धन पूजा की परिपाटी का जन्म हुआ। गौओं के बढ़े बिना और पुष्ट हुए बिना गोरस को बढ़ाया नहीं जा सकता था। गोवर्धन पर्वत की रक्षा करने के कारण ही श्रीकृष्ण को गोवर्धन पर्वत उठानेवाला कहते हैं। इस

12

महापुरुषों के जीवन–चरित्र

योगिराज श्रीकृष्ण चंद्र

जब श्रीकृष्ण का जन्म हुआ, उस समय गांधार प्रदेश से असम तक तथा कैलाश पर्वत से लेकर रामेश्वरम् तक सारे देश में हजारों मनमाने स्वच्छंद राजा भरे पड़े थे। देश छोटे–छोटे भागों में बँट चुका था। कंस का राज्य केवल मथुरा में था, गोकुल और वृंदावन में नहीं था। यद्यपि मथुरा और वृंदावन का अंतर केवल चार कि.मी. था। सभी राजा स्वेच्छाचारी और विलासी थे। एक ओर हस्तिनापुर में कौरव–पांडवों का भयंकर कलह था, दूसरी ओर असम के राजा नरकासुर की भी मनमानी हो रही थी। कंस के दरबार में इतना अत्याचार था कि उसने अपने पिता महाराज उग्रसेन को भी जेल में डाल रखा था। जरासंध सारे देश का राजा बनना चाहता था। चौरासी राजा उसने अपने कैदखाने में डाल रखे थे।

कंस मथुरा के राज्य का सही हकदार नहीं था। क्योंकि देवक और उग्रसेन दो सगे भाई थे। देवक की पुत्री देवकी और उग्रसेन का पुत्र था कंस। भारतीयों में उस समय प्रचलित कानून

लिए अजमेर के सिविल सर्जन डॉ. न्यूमैन बुलाए गए। स्वामी जी को देखकर उसने आश्चर्य से कहा, 'हमने ऐसे दृढ़ हृदय का व्यक्ति नहीं देखा जिसे इस प्रकार नख से शिख तक अपार पीड़ा हो और वह तनिक आह या उफ तक न करे।'

दिन के ग्यारह बजे महर्षि के आदेश के अनुसार औषधियाँ बंद कर दी गईं। साढ़े पाँच बजे ऋषिवर ने कहा, "सब लोगों को बुलाओ और हमारे पीछे खड़ा कर दो। कोई हमारे सम्मुख न हो। चारों ओर के रोशनदान खोल दो" ऐसा ही किया गया। ऋषि के पक्ष, तिथि वार पूछने पर एक भक्त ने उत्तर दिया कि "कृष्ण पक्ष और शुक्ल पक्ष की संधि, अमावस और मंगलवार है।" यह सुनकर उन्होंने छत और दीवारों की ओर दृष्टि की। वेद–मंत्र पढ़े। संस्कृत में ईश्वर की उपासना की, आर्य-भाषा (हिंदी) में ईश्वर के गुणों का कुछ वर्णन करके वे गायत्री का सस्वर पाठ करने लगे। इनके अंतिम शब्द थे, 'हे दयामय! हे सर्वशक्तिमान् ईश्वर! तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो। अहा! तूने अच्छी लीला की।'

इतना कहकर सीधे लेटे रहे स्वामी जी ने एक करवट ली। एक बार श्वास को रोककर एकदम बाहर निकालकर प्राण छोड़ दिए। इस समय शाम के छह बजे थे।

स्वामी जी के इस प्रकार निर्वाण को देखकर इनके भक्त शिष्य पं. गुरुदत्त जो स्वामी जी के उपदेशों से भी आस्तिक न बन पाए थे, मृत्यु का यह दृश्य देखकर परम आस्तिक हो गए।

स्वामी जी द्वारा बताई गई विधि से उनकी अंत्येष्टि की गई। उनके शिष्यों ने उनके कार्य को आगे बढ़ाने के लिए लाहौर में

डी०ए०वी० संस्था को प्रारंभ किया। गुरुकुल भी खोले गए। शास्त्रार्थ हुए। शुद्धि आंदोलन चला। देश को स्वतंत्र कराने के लिए बलिदान दिए गए। उनके कार्यों को आगे बढ़ाने वालों में स्वामी श्रद्धानंद, महात्मा हंसराज, स्वामी दर्शनानंद, पं. लेखराम, पं.गुरुदत्त, महाशय राजपाल, रामप्रसाद बिस्मिल, सरदार भगत सिंह, लाला लाजपतराय, श्यामजी कृष्ण वर्मा, भाई परमानंद, वीर सावरकर, लाला साईंदास, गणेश शंकर विद्यार्थी आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

गुरु विरजानंद की दक्षिणा महर्षि ने सारा जीवन लगाकर पूर्ण की और अब आर्यसमाज भी इसी में अपना योगदान दे रहा है।

स्वामी दयानंद ने लगभग छत्तीस ग्रंथों की रचना की। उनमें से कुछ हैं – 'सत्यार्थप्रकाश', 'ऋग्वेदादिभाष्य–भूमिका', 'संस्कारविधि', 'आर्यभिविनय', 'व्यवहार–भानु' आदि। 'सत्यार्थप्रकाश' स्वामी जी के सिद्धांतों की अनमोल रचना है। यह उनका सबसे प्रमुख ग्रंथ है, जिसमें वेदों के आधार पर स्वामी जी ने भिन्न–भिन्न विषयों की चर्चा की है। इस ग्रंथ के चौदह समुल्लास (अध्याय) हैं। यह एक ऐसा अनमोल ग्रंथ है, जिसमें न केवल धार्मिक अपितु मानव और समाज की सब प्रकार की व्यवस्था पर प्रकाश डाला गया है। और यह ग्रंथ लाखों लोगों के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है।

11

ऋषि दयानंद महिमा

धन्य है तुझको ऐ ऋषि,
तूने हमें जगा दिया।
सो-सो के लुट रहे थे हम,
तूने हमें बचा दिया ।।१।।

अंधों को आँखें मिल गईं
मुर्दों में जान आ गई।
जादू - सा क्या चला दिया,
अमृत - सा क्या पिला दिया ।। २।। धन्य है...

वाणी में क्या तासीर थी
तेरे वचन में ऐ ऋषि।
कितने शहीद हो गए
कितनों ने सर कटा दिया ।। ३।। धन्य है...

अपने लहू से लिख गया,
तेरी कहानी लेखराम।
तूने ही लाला लाजपत,
शेरे बब्बर बना दिया ।। ४।। धन्य है...

श्रद्धा से श्रद्धानंद ने,
सीने पे खाईं गोलियाँ।
हँस-हँस के हंसराज ने,
तन मन धन लुटा दिया ।। ५ ।। धन्य है...

तेरे दिवाने जिस घड़ी,
दक्षिण दिशा को चल दिए।
हैरत में लोग रह गए,
दुश्मन का सिर चकरा गया।।६।। धन्य है...